CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय इतिहास के आदि चरण की रूपरेखा

(पुरा प्रस्तर युग)

5950

5950

विदुला जायसवाल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5950

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भारतीय इतिहास के आदि चरण की रूपरेखा

(पुरा-प्रस्तर युग)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय इतिहास के आदि चरण की रूपरेखा

(पुरा-प्रस्तर युग)

विदुला जायसवाल

1987

स्वाती पब्लिकेशन

दिल्ली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रथम आवृत्ति 1987
पुस्तकालय संस्करण रुपये 60/- मात्र
© विदुला जायसवाल

प्रकाशक :
स्वाती पब्लिकेशन
34 कम्यूनिटी सेन्टर, अशोक विहार,
दिल्ली-110052

मुद्रक :
रस्तोगी प्रेस
त्री नगर, दिल्ली-110035

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विषय-क्रम

	प्राक्कथन	7
1.	आदि मानव व उसका परिवेश	11
2.	पुरा-प्रस्तर युगीन उपकरण, गढ़न पद्धतियाँ व उपयोगिता	22
3.	भारत की पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियाँ	46
4.	मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियाँ	64
5.	उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियाँ	73
	उपसंहार	85
	विशेष सन्दर्भ	88
	परिभाषिक शब्द	89
	निर्देशिका	97

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्राक्कथन

आज का मानव पशु जगत के क्रमिक शारीरिक विकास का हो परिणाम है। चार्ल्स डार्विन के विकासवाद के सिद्धान्त की यह मूल अवधारणा सर्वमान्य है। इस अवधारणा ने एक ओर तो मानव की उत्पत्ति से सम्बन्धित कपोल-कल्पनाओं पर आधारित प्राचीन धारणाओं को निराधार साबित कर दिया दूसरी ओर वैज्ञानिकों व इतिहासकारों को एक तार्किक दृष्टिकोण प्रदान कर अन्वेषण को एक नई दिशा दी। इस नए दृष्टिकोण से प्रभावित हो जिज्ञासु पुरातत्व-वेत्ता अन्य वैज्ञानिकों के साथ आदि मानव के पार्थिव और सांस्कृतिक अवशेषों को खोज में जुट गया। नई खोजों के परिणामस्वरूप यह तथ्य सामने आया की मानव अपने विकास के सम्पूर्ण अस्तित्व काल में नब्बे प्रतिशत भाग में वनमानुषीय शारीरिक विशेषताओं से युक्त जंगली अवस्था में रहा था और पिछले काँटे के केवल चार-पांच हजार वर्षों में वह ग्रामीण व शहरी जीवनयापन करने में व अन्य विकसित तकनीकियाँ हासिल करने में सक्षम हुआ। अपने इस अविकसित प्रारम्भिक काल में वह जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मुख्य रूप से पाषाण उपकरणों का ही गढ़न व प्रयोग कर रहा था जिसके कारण इसको प्रस्तर युगीन मानव व उनके रहन-सहन के तरीकों को प्रस्तर युगीन संस्कृतियों की संज्ञा दी गई है।

प्रस्तर युग (Stone Age) में रहते हुए आदि मानव क्रमशः अपने उपकरणों के निर्माण में प्रयोग की परिपक्व दृष्टि से परिवर्तन एवं विकास करता गया, इस तकनीकी विकास के आधार पर इस युग को तीन मुख्य चरणों में विभाजित करना सम्भव है—पुरा-प्रस्तर युग (Palaeolithic Period), मध्य-प्रस्तर युग (Mesolithic Period) व नूतन-प्रस्तर युग (Neolithic Period)। इस पुस्तिका में हम प्रारम्भिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रस्तर युग, अर्थात् पुरा-प्रस्तर युगीन इतिहास को रूपरेखा प्रस्तुत कर रहे हैं।

पुरा-प्रस्तर युग का मानव वह आदि मानव है जो एक शारीरिक परिवर्तन की प्रक्रिया से होकर गुज़र रहा था। विकासवाद के सिद्धान्त के प्रतिपादन के पश्चात् जो मुख्य प्रश्न वैज्ञानिकों के सम्मुख थे उनका सीधा सम्बन्ध इस आदि मानव के स्वरूप व संरचना से जुड़ा हुआ था। उदाहरण के लिए मानव शाखा कब व कहाँ अपने पशु-स्वरूपीय पूर्वज से पृथक् हुई ? इस मानव की शारीरिक संरचना क्या थी ? कितनी अवधि में व किन परिवर्तनों के आधार पर आज के मानव का ढाँचा निर्मित हुआ ? उसके व्यवहार व रहन-सहन का क्या तरीका था ? इत्यादि। इन सभी प्रश्नों का शरीर विज्ञान सम्बन्धी अध्ययनों के अतिरिक्त मानव सस्कृति व सभ्यता के इतिहास हेतु भी अवमूल्यन आवश्यक हो जाता है। आज तक की खोजों के आधार पर आदि मानव या पुरा-प्रस्तर युगीन मानव की शारीरिक संरचना के इतिहास को संक्षिप्त रूप में प्रथम अध्याय में प्रस्तुत किया गया है। साथ ही इस अध्याय में इस युग के परिवेश का भी उल्लेख है क्योंकि उस काल के मानव के रहन-सहन पर समकालीन वातावरण का बहुत गहरा प्रभाव था।

पुरा-प्रस्तर युग के इतिहास का वर्णन यहाँ मुख्य रूप से भारतीय उपमहाद्वीप के सन्दर्भ में ही किया गया है। परन्तु चूंकि भारतीय उपमहाद्वीप में अब तक के संकलित प्रमाण अपर्याप्त हैं, दूसरी ओर अफ्रीका व योरोप महाद्वीपों से प्राप्त अवशेष इतने महत्वपूर्ण हैं कि उनकी अवहेलना से आदि मानव का इतिहास विश्रृंखलित एवं अधूरा रह जाता है। अतः समय-समय पर विश्व के अन्य क्षेत्रों के प्रमाणों की भी चर्चा की गई है।

सांस्कृतिक अवशेषों की चर्चा के पूर्व इस काल के मुख्य पाषाण उपकरणों का एक परिचय अधिक उपयोगी प्रतीत होता है क्योंकि सम्पूर्ण व्याख्या इन उपकरणों के अस्तित्व, संख्या, उपस्थिति या विलोप पर निर्भर करती है। उपकरणों के आकार-प्रकार के साथ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो उनकी गढ़न पद्धतियों व सम्भावित उपयोगिताओं पर भी द्वितीय अध्याय में प्रकाश डाला गया है।

बाद के तीन अध्याय—तृतीय, चतुर्थ व पंचम—क्रमशः पुरा-प्रस्तर युग के सर्वमान्य तीन चरणों—पूर्व पुरा-प्रस्तर काल (Lower Palaeolithic Period), मध्य पुरा-प्रस्तर काल (Middle Palaeolithic Period) व उच्च पुरा-प्रस्तर काल (Upper Palaeolithic Period) के अवशेषों की चर्चा करते हैं। इन अध्यायों में तीनों चरणों की सांस्कृतिक उपलब्धियों के स्वरूप का वर्णन किया गया है।

इस पुस्तिका का समापन उपसंहार से किया गया है जिसमें चर्चित युग के इतिहास के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर और सम्बन्धित अन्वेषण की नई दिशाओं पर विचार व्यक्त किए गए हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1

आदि मानव व उसका परिवेश

पृथ्वी के अस्ति[illegible] लगभग पचास खरब वर्षों की अवधि में मानव का आगमन बहुत हाल की घटना प्रतीत होती है। चतुर्थ व अन्तिम युग, जो कि भू-भौतिक काल विभाजन का आखिरी चरण है, में ही मानव का अस्तित्व दिखाई पड़ता है। चतुर्थ युग (Quaternary Period) के प्रथम चरण-प्रतिनूतन काल (Pleistocene Period) में मानव शाखा का अलगाव वनमानुष शृंखला से हुआ। वनमानुषीय शारीरिक संरचना से आज के मानवीय स्वरूप की प्राप्ति से प्रतिनूतन काल के मध्य व उच्च चरणों में हुए क्रमिक विकास का परिणाम है। आज से लगभग बीस लाख वर्ष पूर्व और दस हज़ार वर्ष पूर्व के मध्य जो शारीरिक परिवर्तन हुए वह पुरा-प्रस्तर युगीन मानव के अलग-अलग रूप हैं।

प्रतिनूतन काल में हुई शारीरिक परिवर्तन की प्रक्रिया का क्रम मध्यम गति से घटने वाली वह घटना थी जिसमें स्पष्ट रूप से शारीरिक वनमानुषीय संरचना से हट कर आज की मानवीय विशेषताओं की ओर विकास की उन्मुक्त प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। अब तक प्राप्त प्रस्तरीकृत हड्डियाँ (Fossils) मानव के इस विकासक्रम को सिद्ध करतीं हैं। इसके साथ-साथ कुछ विशेष शारीरिक अंगों की बनावट जैसे—मस्तिष्क क्षमता (Cranial Capacity), द्वी पदीय सन्तुलन क्षमता (Erect Posture), चेहरे की बनावट, दन्त पंक्तियों का स्वरूप इत्यादि भी आदि मानव के स्वरूप के विकासक्रम को समझने में अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। इन अवयवों में दोनों वर्गों—वनमानुष व मानव—में स्पष्ट भेद दिखलाई पड़ते हैं। वनमानुष से मानव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के मध्य की विकास कड़ियों में मिश्रित गुणों का अस्तित्व क्रमश अलग-अलग विकसित दिखलाई देता है।

तृतीय युग (Tertiary Period) के अन्त तक पृथ्वी पर कई प्रकार के बन्दरों व वनमानुषों के वर्गों का अस्तित्व दिखाई देता है। इनकी संरचना व विकास के द्वारा मानव उत्पत्ति की पृष्ठभूमि तैयार हुई। वनमानुष पशु जगत का मानव के अतिरिक्त दूसरा सबसे विकसित सदस्य है और इसका परिष्कृत स्वरूप ही मानव है।

प्रतिनूतन काल के प्रारम्भ में भारतीय उपमहाद्वीप व अफ्रीका के जंगलों में एक ऐसे जीव के अस्तित्व के प्रमाण प्राप्त हुए हैं जिसके शरीर में अपने पूर्वज (विशुद्ध रूप से वनमानुष) के गुणों से कुछ बदलाव के संकेत दिखाई पड़ते हैं। ड्रायोपिथेकस (*Dryopithecus*) नामक इस जीव के दो वर्ग के होने के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। एक वर्ग आज की मानवीय शाखा के शारीरिक गुणों की झलक दिखलाता है, जबकि दूसरे वर्ग में वनमानुषों की विशेषताएँ विद्यमान हैं। अतः ड्रायोपिथेकस ही सम्भवतः वह जीव है जिसकी कल्पना डार्विन ने अपने विकासवाद के सिद्धान्त में की थी तथा आज के मानव एवं वनमानुष शाखाओं के एक ही पूर्वज की सम्भावना पर बल दिया था।

भारतीय उपमहाद्वीप में ड्रायोपिथेकस प्राणी के अवशेष हिमालय के क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं। इन प्रस्तरीकृत अवशेषों में वनमानुषीय गुणों वाले वर्ग को हनुमानपिथेकस (*Hanumanapithecus*) व मानवीय गुणों वाले जीवों को रामपिथेकस (*Ramapithecus*) और शिवपिथेकस (*Sivapithecus*) आदि की संज्ञाएँ प्रदान की गई हैं। इन अवशेषों के आधार पर उत्तर भारत का पर्वतीय क्षेत्र प्रारम्भ में मानव की उत्पत्ति का सम्भावित स्थल माना गया था किन्तु कालांतर में अन्य प्रमाणों के अभाव में यह सम्भावना धूमिल पड़ती गई, उधर अफ्रीका महाद्वीप से कई महत्वपूर्ण प्रमाण मिले जिनके आधार पर मानव की उत्पत्ति का स्थल आज अफ्रीका माना जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूर्वी अफ्रीका के ताँगानिका राज्य में स्थित ऑल्डोवॉय की घाटी (Olduvai Gorge) से प्राप्त प्रमाणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज से लगभग अठारह लाख वर्ष पूर्व मानवीय गुणों वाले वनमानुष ऑस्ट्रैलोपिथेकस (*Australopithecus*) वंश के कुछ सदस्यों ने सर्वप्रथम पाषाण उपकरणों का निर्माण किया। मानवीय गुणों वाले इस वनमानुष को पाषाण संस्कृति के संस्थापक के रूप में स्वीकार किया गया है। पाशविक शारीरिक स्वरूप होने पर भी इसको प्रथम मानव केवल इसलिए माना गया है क्योंकि यह एक संस्कृति का निर्माता है जो मूल रूप से मानवीय गुण हैं।

आस्ट्रैलोपिथेकस आज के वनमानुषों से अधिक विकसित शारीरिक संरचना वाला जीव था। यह वृक्षों पर न रह कर भूमि पर ही रहता था। वैज्ञानिकों का यह भी अनुमान है कि ऑस्ट्रैलोपिथेकस दलों में एक सीमित क्षेत्रीय दायरे में रहता था।

5950

शारीरिक परिवर्तन के क्रम में जहाँ उसने कुछ विशेष क्षमताएँ अर्जित कीं जैसे मस्तिष्क क्षमता का विकास इत्यादि वहीं उसने अपने कुछ पूर्वगत विशेष गुण खोए भी, उदाहरण के लिए सामने वाले तीखे दाँतों (Canine) का आकार छोटा हुआ एवं उनकी तीक्ष्णता भी कम हो गई। इन गुणों के अभाव में अपनी सुरक्षा एवं सुरक्षात्मक व रोजमर्रे के कार्यों के लिए यह आदिमानव पाषाण उपकरण गढ़ने के लिए बाध्य हुआ।

ऑस्ट्रैलोपिथेकस द्वारा बनाए पाषाण उपकरणों के वर्ग को ऑल्डोवॉन संस्कृति (Oldowan Culture) की संज्ञा दी गई है। इस नामकरण का आधार ऑल्डोवॉय घाटी है जहाँ से सर्वप्रथम इस संस्कृति के स्वरूप को पहचान हुई। ऑल्डोवॉन संस्कृति में साधारण गोल आकार के पत्थर के टुकड़ों को पाषाण के ही गोल भारी ढ़ोकों को हथौड़े की तरह उपयोगकर धार व नोक प्राप्त करने का प्रयत्न दिखाई पड़ता है। इस वर्ग में कुट्टव्यक (Chopper), कुट्टन्तिक (Chopping Tool), कुछ चिप्पड़ (flake) व क्रोड़ (Core) आदि प्राप्त होते हैं (उपकरणों का वर्णन बाद के अध्याय में किया गया है)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अफ्रीका के अतिरिक्त ऑस्ट्रेलोपिथेकस के प्रस्तरीकृत अवशेष यद्यपि विश्व के अन्य किसी क्षेत्र से अभी तक नहीं प्राप्त हुए हैं परन्तु इस संस्कृति ने जिन उपकरणों के निर्माण की परम्परा प्रारम्भ की वे दक्षिणी-पूर्वी एशिया एवं भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिम भाग के कई स्थलों से भी प्राप्त हुए हैं। यह उपकरण वर्ग इस बात की सम्भावना प्रगट करते हैं कि प्रारम्भिक उपकरण गढ़न तकनीक विश्व के कुछ क्षेत्रों में परवर्ती कालों में भी प्रचलित रही अतः इनको केवल आकार-प्रकार की समानता के आधार पर ऑल्डोवॉन संस्कृति के समकालीन मानना उचित नहीं होगा।

शारीरिक संरचना की दृष्टि से होमो-इरेकटस (*Homo-Erectus*) ऑस्ट्रेलोपिथेकस का उत्तराधिकारी है, यही आज के मानव का आदिम रूप है। यह होमो जीनस (Homo genus) वाला प्रथम प्राणी है और आज का मानव भी इसी वर्ग के जीनस का सदस्य है। इसके अतिरिक्त होमो-इरेकटस द्वी-पदीय सन्तुलन क्षमता भी रखता था जो कि उसके पूर्वजों में अविकसित थी पर यह आज के मानव की विशेषता है।

होमो-इरेकटस के प्रस्तरीकृत अवशेषों को भूभौतिक परीक्षणों के आधार पर दस से पाँच लाख वर्षों के मध्य रखा गया है। इनके अवशेष अफ्रीका के अतिरिक्त योरोप व दक्षिण-पूर्व एशिया से भी पर्याप्त संख्या में मिले हैं। सामान्य रूप से ये विकसित मस्तिष्क तथा उपरोक्त दोनों विशेष शारीरिक क्षमताओं से युक्त थे। इसके अतिरिक्त होमो-इरेकटस के सदस्यों में कई अन्य शारीरिक भेद भी पाए जाते हैं।

विकसित बौद्धिक क्षमता व द्वी-पदीय सन्तुलन क्षमता द्वारा दोनों हाथ अलग कार्यों के लिए उपलब्ध होने के परिणामस्वरूप पाषाण गढ़न शैली में परिष्कार स्पष्ट रूप से होमो-इरेकटस मानव के सांस्कृतिक अवशेषों में दिखलाई पड़ता है। एक नवीन पद्धति का प्रचलन—जिसमें बेलनाकार मुलायम हथौड़ों (Cylindrical soft hammer) द्वारा बारीक व सन्तुलित चिप्पड़ निकाल कर उपकरणों की बढ़िया तराश

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

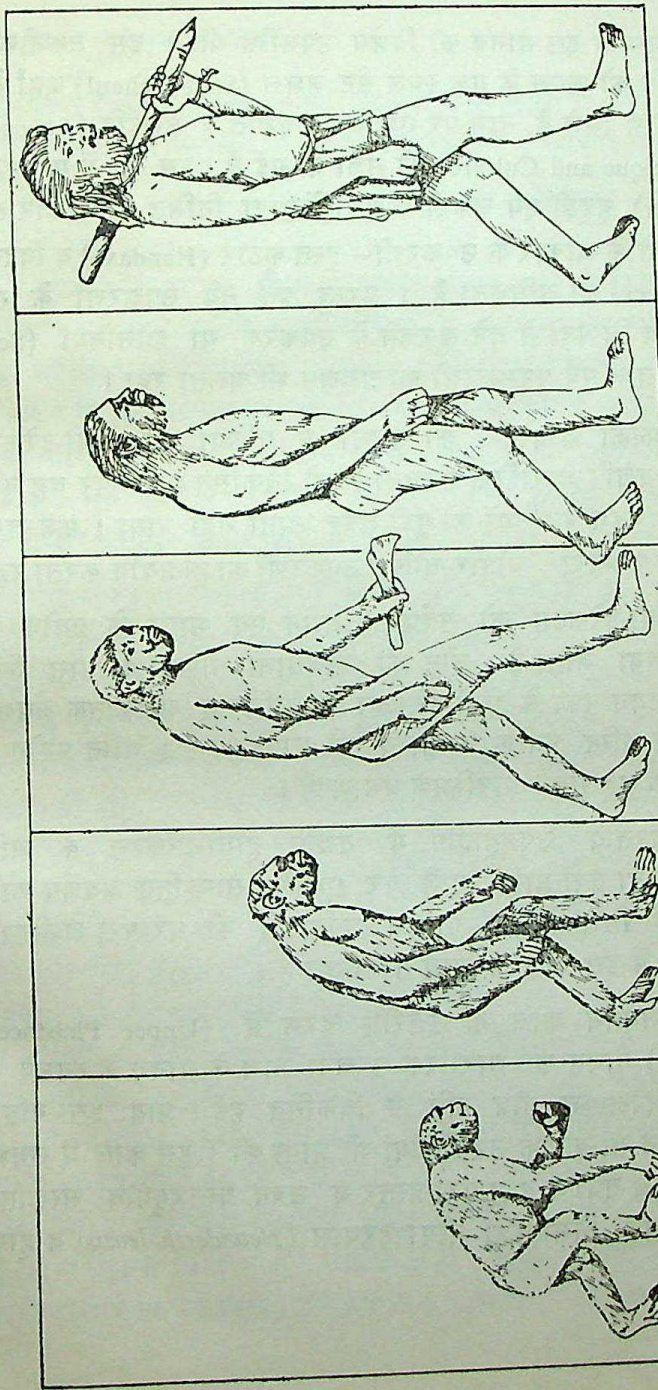

1. ड्रायोपिथेकस 2. रामापिथेकस 3. ऑस्ट्रेलोपिथेकस 4. होमो-इरेक्टस 5. होमो-सापियन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की परम्परा इस मानव की विशेष उपलब्धि थी । इस तकनीक व संस्कृति को फ्रान्स के एक स्थल सेंट अशूल (Sant Acheul) जहाँ से ये उदाहरण मिले हैं, नाम पर एशूलियन पद्धति व संस्कृति (Acheulian Technique and Culture) की संज्ञा दी गई है । इस वर्ग में मृग शृंगों (antler), हड्डी एवं लकड़ी के हथौड़ों द्वारा निर्मित अण्डाकार तथा कुल्हाड़ी के आकार के उपकरणों—हस्त कुठार (Handaxe) व विदलक (Cleaver) की अधिकता है । परन्तु इन नये उपकरणों के साथ सामान्य चिप्पड़ों से बने खुरचने के उपकरण या छोलनियाँ (Scrapers) तथा पूर्व परम्पराओं का प्रचलन भी चलता रहा ।

अफ्रीका व योरोप की तुलना में एशिया का होमो-इरेकटस मानव यद्यपि शारीरिक संरचना में तो विकसित था —पर वह नूतन पाषाण गढ़न पद्धतियों को पूरी तरह अपना नहीं पाया । फलस्वरूप वह पूर्व परम्परा चौपोर-चौपिंग उपकरणों का हो प्रयोग करता रहा ।

होमो-इरेकटस को सर्वप्रथम अग्नि एवं भाषा के प्रयोग का श्रेय दिया जाता है । चीन की राजधानी पेकिंग के पास स्थित चौकोटियन गुफा से होमो-इरेकटस के पार्थिव व सांस्कृतिक अवशेषों के साथ अग्नि प्रयोग के साक्ष्य भी प्राप्त हुए हैं । अग्नि प्रयोग का संभवतः यह सबसे प्रारम्भिक प्रमाण है ।

भारतीय उपमहाद्वीप में यद्यपि होमो-इरेकटस क अस्थि अवशेष तो नहीं प्राप्त हुए हैं पर एशूलिय सांस्कृतिक अवशेष काफी मात्रा में मिले हैं, यह पाषाण उपकरणों की परम्परा अफ्रीका व योरोप में इस प्राणी के साथ सम्बन्धित है ।

प्रतिनूतन काल के उत्तरीय चरण में (Upper Pleistocene Period) मानव की शारीरिक संरचना आज के मानव के स्वरूप की ओर अपेक्षाकृत तीव्र गति से विकसित हुई । प्रायः इसी गति से मानव ने सांस्कृतिक उपलब्धियां भी प्राप्त कीं । इस काल में लगभग एक लाख वर्षों में मध्य पुरा-प्रस्तर व उच्च प्रस्तरयुगीन संस्कृतियों तथा उनके निर्माताओं नीयाण्डरथाल (*Neanderthalensis*) व होमो-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सापियनस (*Homa-Sapiens*) का विकास प्राप्त होता है। इस काल के लिए योरोपीय महाद्वीप के अवशेष विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

प्रतिनूतन काल के अन्तिम चरण—उच्च प्रतिनूतन काल में आज के मानव का प्रतिरूप होमो-सापियन का विकास हो चुका था। पूर्वज होमो-इरेकटस से होमो-सापियन मानव तक के विकास का इतिहास अज्ञात है क्योंकि दोनों प्राणियों के मध्य लगभग डेढ़ लाख वर्षों का व्यवधान प्रस्तरीकृत अवशेषों में दिखाई पड़ता है। होमो-सापियन के प्रारम्भिक काल में एक अन्य अल्पजीवी मानवीय शाखा होमो नीयाण्डरथाल के अस्तित्व योरोप, अफ्रीका व एशिया से प्राप्त होते हैं। मूल शारीरिक विकास क्रम में बिना विशेष योगदान के इस शाखा का विलोप हो गया।

नीयाण्डरथाल मानव का जीवनकाल आज से डेढ़ लाख स चालीस-पचास हज़ार वर्ष पूर्व के मध्य रखा गया है। बुद्धि की क्षमता की दृष्टि से यह आधुनिक मानव के बहुत समीप था पर मुख व पैरों की बनावट की दृष्टि से इसमें अविकसित स्वरूप विद्यमान थे। नीयाण्डरथाल मानव को मुस्टेरियन संस्कृति (Mousterian Culture) की परिपक्व शाखाओं का निर्माता माना गया है। इस संस्कृति का नामकरण फ्रांस के ला मुस्टेर (Le Moustier) नामक स्थान के आधार पर किया गया है तथा इस संस्कृति के अन्तर्गत मध्य पुरा-प्रस्तर युगीन सब सांस्कृतिक अवशेषों को रखा जाता है और तकनीकी विशेषताओं व उपकरणों के प्रकार के आधार पर उनको कई उप सांस्कृतिक चरणों में विभाजित किया गया है। जिन दो सांस्कृतिक वर्गों—विशुद्ध मुस्टेरियन (Typical Mousterian) व कीना-फेरासी मुस्टेरियन (Qina-Ferrassie Mousterian) संस्कृतियों से नीयाण्डरथाल मानव के अवशेष प्राप्त किए गए हैं उनसे अनेक नई व विशेष गढ़न पद्धतियों के प्रचलन के भी प्रमाण प्राप्त होते हैं। मुस्टेरियन व लवालुवा तकनीकी (Mousterian, Levallois Techniques) से निकले चिप्पड़ों की अधिकता व बढ़िया प्रकार से तराशे धारों वाले उपकरण विशेष उल्लेखनीय हैं (इनका विवरण आगे प्रस्तुत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया गया है)। इस संस्कृति के मानव की तम्बुओं में रहने की कल्पना भी की गई है तथा कुछ पाषाणों पर रंगों की रेखाओं के भी प्रमाण प्राप्त हुए हैं जिनको जादू-टोना का आदि रूप माना जा सकता है।

भारतीय उपमहाद्वीप में नीयाण्डरथाल मानव की अस्थियों का अभाव तो है ही साथ ही यहां से जो मध्य पुरा-प्रस्तर युग के सांस्कृतिक अवशेष प्राप्त हुए हैं वे भी उन योरोपीय मुस्टेरियन संस्कृतियों के समान हैं जिनमें नीयाण्डरथाल मानव के अवशेषों का अभाव है।

होमो-सापियनस को मूल शाखा को स्पष्ट रूपरेखा प्रतिनूतन काल के अन्तिम चरणों में उभरती है। योरोपीय महाद्वीप जहाँ इस मानव के अवशेष काफी मात्रा में प्राप्त हुए हैं—वहां इस वर्ग से आधुनिक जनसंख्या के प्रजातीय गुण भी उभरते प्रतीत होते हैं। उनके सांस्कृतिक अवशेषों में पाषाण उपकरणों के परिष्कृत उदाहरण हड्डी व शृंगों पर बने विभिन्न प्रकार के उपकरण, चित्र, स्त्री मूर्तियां आदि प्राप्त हुए हैं। इन अवशेषों के आधार पर धार्मिक मान्यताओं, कला आदि की उत्पत्ति का श्रेय इस उच्च पुरा-प्रस्तर काल मानव को ही मिलता है।

भारतीय उपमहाद्वीप में इस काल के मानव के अस्थि अवशेष तो नहीं प्राप्त हैं पर सांस्कृतिक अवशेष अवश्य मिले हैं। लेकिन योरोप की तुलना में उपकरणों का प्रकार व गढ़न पद्धतियाँ कम विकसित दीख पड़ती हैं।

प्रतिनूतन काल का पशु वर्ग

मानव व वनमानुष की शाखाओं के समान ही अन्य पशु जगत के सदस्यों का भी स्वरूप प्राचीन काल में परिवर्तनशील रहा। इनके परिवर्तन का इतिहास पुरा-प्रस्तर युग के मानव के परिवेश पर तो प्रकाश डालता ही है साथ ही साथ इनकी प्रस्तरीकृत हड्डियों द्वारा तिथि निर्धारण में भी सहायता मिलती है।

चार पैर वाले थनधारी जानवरों जैसे—बैल, हाथी, घोड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आदि की विशेष संरचना तृतीय काल के अन्तिम चरण व चतुर्थ काल के आरम्भ में दिखाई पड़ती है। इस स्वरूप को विलाफ्रांशियाँ पशु-वर्ग (Villafranchiana fauna) कहा गया है। पूर्व प्रतिनूतन काल (Lower Pleistocene Period) में यह वर्ग अपनी विकसित अवस्था में प्राप्त होता है जिसको उत्तरी विलाफ्रांशियाँ वर्ग की संज्ञा प्रदान की गई है। मध्य व उच्च प्रतिनूतन कालों में इनमें से कुछ सदस्यों का और परिष्कार हुआ व उनकी जनसंख्या में भी बदलाव हुआ।

इन तथ्यों का उपयोग पुरातत्व में कई बार महत्वपूर्ण प्रश्नों पर प्रकाश डालने में सफल होता है। उदाहरण के लिए ऑल्डोवान संस्कृति व समकालीन मानवीय अवशेषों के साथ उत्तर विलाफ्रांशियाँ वर्ग के पशुओं के अस्थि अवशेषों के आधार पर आदि मानव व उसके द्वारा गढ़े उपकरणों की प्राचीनता को समर्थन मिलता है। दूसरे उदाहरण में नोमेडिकस वर्ग (*Namadicus* group) के पशु-अवशेषों जिनमें बैल, घोड़ा व हाथी के प्रतिरूप (*Bos*, *Equus*, *Elephus*) के आधार पर दक्षिणी भारत की नदियों के प्रथम गुटिकीय जमाव (Gravel I) व उनसे प्राप्त एशूलियन परम्परा के उपकरणों को मध्य प्रतिनूतन काल का माना गया है क्योंकि नोमेडिकस पशु-वर्ग का अस्तित्व मध्य प्रतिनूतन काल में सीमित था।

प्रतिनूतन काल की जलवायु

पुरा-प्रस्तर युग की समकालीन जलवायु अत्यधिक परिवर्तन-शील थी। प्रतिनूतन काल में जलवायु चक्रों के अस्तित्व मिलते हैं जिनके प्रमाण भूभौतिक स्तरों व जमावों से प्राप्त किए गए हैं। उच्चांशों व पर्वतीय क्षेत्रों में ये जलवायु चक्र (Climatic Cycles) हिम युग (Glacial Period) व हिमप्रत्यावर्तन युग (Inter-glacial Period) के रूप में विद्यमान थे। परन्तु निचले स्थानों में व उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों (Tropical regions) में ये चक्र अतिवृष्टि (Pluvial) व अल्प-वृष्टि (Inter-Pluvial) काल के रूप में प्राप्त होते हैं। इन जलवायु चक्रों का सीधा प्रभाव समकालीन वनस्पति व पशुओं की स्थानान्तरण प्रवृत्ति पर था और क्योंकि आदि मानव स्वयं पाशविक जीवन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्यतीत कर रहा था तथा जीवन-निर्वाह के लिए वह पशु जगत पर आश्रित था अतः वह भी इनसे प्रभावित हुआ।

उच्चांशों में जैसे योरोप में आल्पस पर्वत का समीपवर्ती क्षेत्र, उत्तरी अमेरिका एवं भारतीय उपमहाद्वीप में हिमालय पर्वत का प्रदेश हिम व हिम प्रत्यावर्तन युगों के दौर से प्रतिनूतन काल में गुजर रहा था। इन जलवायु चक्रों के सबसे अच्छे प्रमाण योरोप से प्राप्त हैं। यहां पाँच हिम युगों के अस्तित्व प्राप्त हैं। यह प्राचीनता के क्रम से क्रमशः डान्यूब (Danube), ग्विंज़ (Günz), मिण्डल (Mindel), रिस (Riss) व व्यूम (Würm) के नाम से जाने जाते हैं। ये नामकरण उन स्थलों के नाम पर आधारित हैं जहां से इनके अस्तित्व पहली बार पहचाने गए।

प्रत्येक हिम युग के मध्य के अन्तराल को हिम-प्रत्यावर्तन युग कहा जाता है। इस समय हिम युगों की तुलना में जलवायु कुछ गर्म हो गयी थी। इन अन्तराल के कारण हिम युगों में बिछी दूर-दूर तक की बर्फीली तह पिघल कर बहुत ऊंचे क्षेत्रों में ही सीमित रह जाती थी। इन कम ठण्डे कालों को पूर्व व परवर्ती हिम युगों के नाम से जाना जाता है। जिन चार हिमप्रत्यावर्तन युगों के अवशेष योरोप में प्राप्त हैं उनको क्रमशः डान्यूब-ग्विंज (Danube-Günz), ग्विंज-मिण्डल (Günz-Mindel), मिण्डल-रिस (Mindel-Riss) व रिस-व्यूम (Riss-Würm) की संज्ञा से सम्बोधित किया जाता है।

उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों (Tropical regions) में अति-वृष्टि व अल्प-वृष्टि जलवायु चक्र के सर्वाधिक सन्तोषजनक प्रमाण अफ्रीका महाद्वीप से प्राप्त हुए हैं। यहाँ प्राप्त चार अति-वृष्टि चक्रों के अवशेषों को स्थानों के नाम के आधार पर क्रमश कागेरन (Kageran), कांजेरान (Kanjeran), कामासियन (Kamasian) व गैम्बलियन (Gamblian) कहा गया है। प्रत्येक दो अति-वृष्टि कालों के मध्य अल्प-वृष्टीय चक्र मिलते हैं। इन चक्रों का प्रभाव स्पष्ट रूप से झीलों के जल स्तर में वृद्धि व घटाव के रूप में दिखाई पड़ता है।

पुरा प्रस्तर युगीन संस्कृतियों का इतिहास उपरोक्त समस्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाँच हिमयुगों में फैला दिखाई देता है। ऑल्डोवान संस्कृति को उत्पत्ति लगभग योरोप के डान्यूब हिम युग के समकालीन अफ्रीका में हुई। ऑस्टेलोपिथेकस व उच्च विलाफ्रांशियॉव वर्ग के पशुओं का अस्तित्व भी इसी काल का है। एशूलियन संस्कृति का प्रारम्भ मिण्डल हिम युग में दिखाई पड़ता है तथा इस समय तक होमो-इरेक-टस मानव का स्वरूप भी स्पष्ट हो जाता है। एशूलियन संस्कृति का अस्तित्व सम्पूर्ण मिण्डल-रिस हिम प्रत्यावर्तन युग, रिस हिम युग व रिस-व्यूम हिम प्रत्यावर्तन युगों में विद्यमान है। प्रारम्भ से रिस-व्यूम हिम प्रत्यावर्तन युग तक का इतिहास पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के अन्तर्गत रखा जाता है।

अन्तिम हिम युग-व्यूम में मानव शरीर व संस्कृतियों का इतनी तेजी से विकास होता है कि इस युग को चार उपचरणों में विभाजित किया गया है जिनको प्रथम से चतुर्थ उपचरणों (Inter-stadial I-IV) के रूप में माना जाता है। प्रथम दो चरणों में मुस्टे-रियन संस्कृति व नीयाण्डरथाल मानव के अवशेष प्राप्त होते हैं जिनको मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन वर्ग में संकलित किया जाता है।

अन्तिम हिम युग के अन्तिम दो चरणों (व्यूम तृतीय व चतुर्थ) में होमो-सापियन मानव व उसके द्वारा निर्मित उच्च पुरा-प्रस्तर कालोन संस्कृतियों के अवशेष प्राप्त होते हैं।

आज से लगभग दस हजार वर्ष पूर्व नूतन युग (Holocene Period) प्रारम्भ होता है। यह तिथि मानव व पशु जगत के विकास क्रम के व प्रतिनूतन काल की जलवायु सम्बन्धी परिवर्तन के ठहराव व आज के स्वरूप की प्राप्ति के लिए भी उल्लेखनीय है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2

पुरा-प्रस्तर युगीन उपकरण, गढ़न पद्धतियाँ व उपयोगिता

पुरा-प्रस्तर युग के सांस्कृतिक अवशेष भारत में मुख्य रूप से पाषाण उपकरणों के समूहों के रूप में प्राप्त होते हैं । लकड़ी, हाथी दाँत व श्रृंगों का प्रयोग उपकरण बनाने के माध्यम के रूप में सम्भावित तो है और अफ्रीका व योरोप महाद्वीपों से इसके प्रमाण भी प्राप्त हैं—पर भारतीय उपमहाद्वीप से इनके पुरातात्विक अवशेषों का अभाव है। अतः भारत में पूर्व पाषाण युग (Old Stone Age/ Palaeolithic Period) में मानव के क्रिया-कलाप पाषाण गढ़न तकनीक के रूप में ही मुख्य रूप से दिखाई देते हैं। इन की गढ़न विधियों को, उपकरणों की नकल के प्रयासों (tool replicating) जनजातियों द्वारा प्रयुक्त पद्धतियों (Ethnographic studies) के अध्ययन व प्राचीन उपकरणों के प्रकार-अध्ययनों (typological studies), के आधार पर समझा जाता है।

धातु ज्ञान के पूर्व का प्रस्तर युग मुख्य रूप से प्राकृतिक रूप में उपलब्ध अधात्विक माध्यम जैसे पाषाण खंड, हड्डियाँ, श्रृंग व लकड़ी के टुकड़ों के हथौड़ों द्वारा पाषाण तोड़ने के ढंगों के रूप में प्राप्त होता है। इन तरीकों में परिष्कार तथा परिणामस्वरूप उपकरणों के स्वरूप व उपयोगिता में सुधारता दिखाई पड़ती है । उदाहरण के लिए प्रारम्भिक उपकरण अधिक परिश्रम व पाषाण खण्ड के काफी भाग को बर्बाद करने के बाद भी भौड़े स्वरूप के हैं जबकि बाद के काल में कम श्रम व बिना अधिक पाषाण को बर्बाद किए अच्छी धार व नोक वाले उपकरण बनाये जाने लगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाषाण गढ़न मुख्य रूप से तीन तोड़ने की प्रक्रियाओं पर आधारित हैं। इन्हीं तीनों के प्रयोग से समस्त पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरणों का गढ़न किया गया है। ये विधियाँ—पटक कर तोड़ना (Block-on-block technique), प्रहार द्वारा तोड़ना (Percussion technique) तथा दबाव द्वारा तराशने (Pressure flaking) की क्रियाएँ हैं। इनका प्रचलन अलग-अलग समय में प्रारम्भ हुआ तथा इनके प्रयोग को मात्रा में भी विभिन्न कालों में भेद मिलता है।

पटक कर तोड़ने की विधि में पाषाण के चुने हुए टुकड़े को बड़े पाषाण खण्ड जो कि धरती पर स्थित होता है अहरन पर पटक कर तोड़ा जाता है। बड़े व छोटे चिप्पड़ उपलब्ध करने की यह विधि

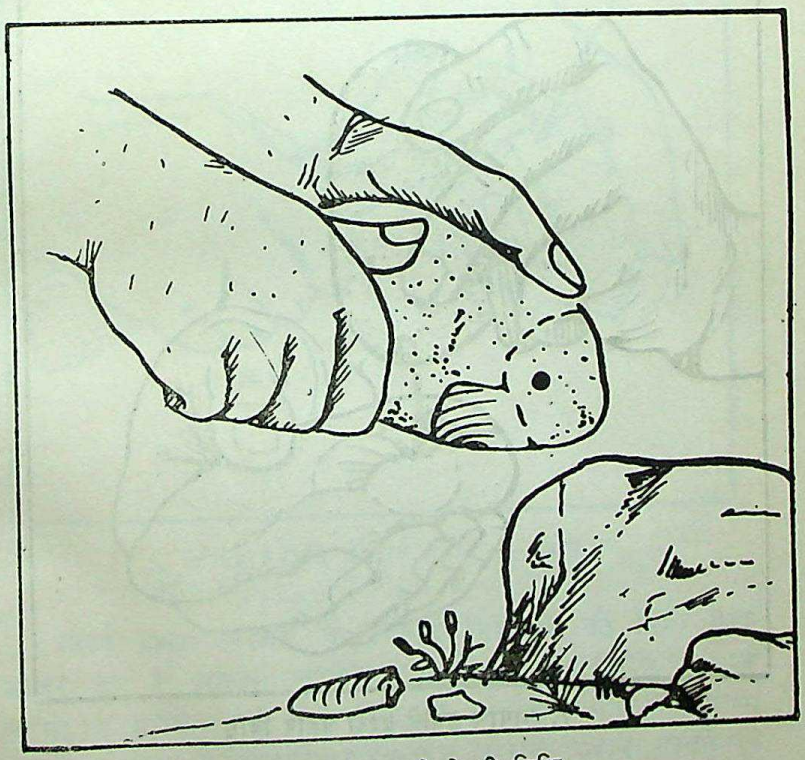

6. पटक कर तोड़ने की विधि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काफी प्रारम्भिक है व इससे बारीक व नियंत्रित तराश सम्भव नहीं है।

प्रहार विधि में हथौड़ों द्वारा प्रहार करके चुने हुए पाषाण टुकड़ों को गढ़ा जाता है। हथौड़ों के आकार व माध्यम गढ़न व तराश को बहुत प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए पत्थर के गोल

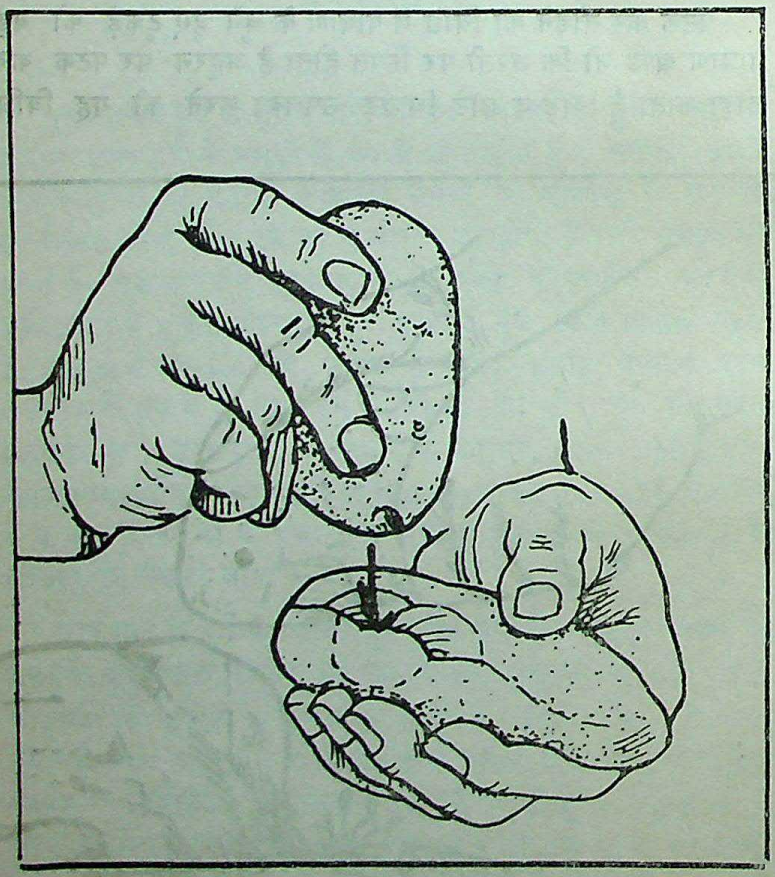

7. पाषाण हथौड़े द्वारा प्रहार विधि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारी हथौड़ों की मार का परिणाम भौंडी तराश व टेढ़ी-मेढ़ी धार होती है जबकि लम्बे व मुलायम हथौड़ों के प्रयोग से तराश को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है। यह दूसरा प्रकार सामान्यतः शृंगों, हड्डी व लकड़ी के बेलनाकार हथौड़ों द्वारा एशूलियन परम्परा के उपकरणों के तैयार स्वरूप को गढ़ने में प्रयुक्त दिखाई पड़ता है। धारों व नोकों की विशेष तैयारी में भी इनका प्रयोग सम्भावित है।

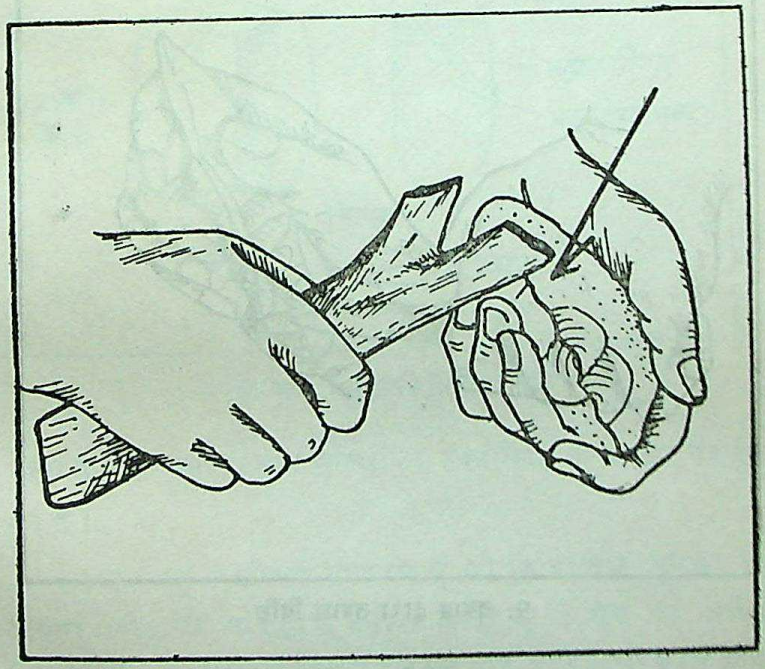

8. प्रहार विधि में लम्बे हथौड़े का प्रयोग

दबाव द्वारा तराशने व चिप्पड़ निकालने की विधि पुरा-प्रस्तर युग के अन्तिम चरणों में प्रचलित हुई। नुकीले व लम्बे शृंगों को विशेष रूप से तैयार किए गए बारीक कणों वाले पाषाण टुकड़ों या कोड़ों के किनारों पर रख कर जोर से दबाव डालने पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छोटे, पतले व संकरे चिप्पड़ छुरी-फल (blade) प्राप्त किए जाते थे। इसके अतिरिक्त चिप्पड़ों की धार व सतहों को भी इस विधि से अच्छी तरह तराशा जा सकता था।

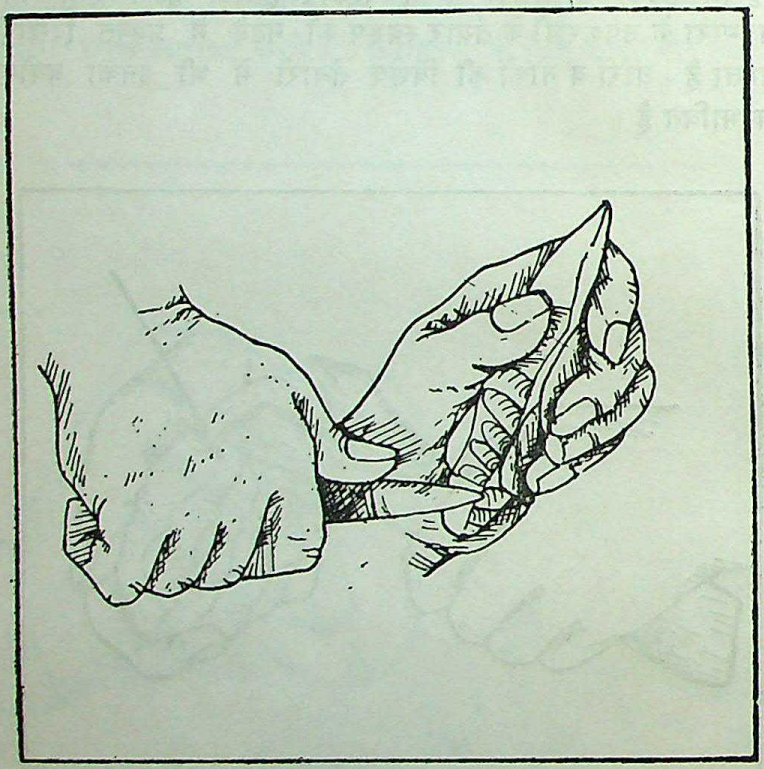

9. दवाव द्वारा तराश विधि

प्रहार द्वारा टूटा पाषाण चाहे वह जिस विधि से तोड़ा गया हो दो खण्डों में भग्न होता है। एक खण्ड जो कि मूल या क्रोड़ होता है। उससे दूसरा पतला छोटा टुकड़ा अलग हो जाता है जिसको चिप्पड़ कहते हैं। मूल खण्ड या क्रोड़ पर विच्छेदित चिप्पड़ों के निशान बन जाते हैं जबकि चिप्पड़ों की वह सतह जो खण्ड से अलग हुई है उस पर प्रहार का उभार (bulb of percussion) व अर्द्ध वृत्ताकार निशान (ripple marks) पाए जाते हैं। मानवकृत प्रत्येक गढ़ा पाषाण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मूल रूप में क्रोड़ या चिप्पड़ ही होता है। पुनः तराश द्वारा या विशेष गढ़न विधियों द्वारा उनको अलग-अलग स्वरूप व आकार प्रदान किया जाता है जिनके कारण उनको कई वर्गों में विभाजित किया

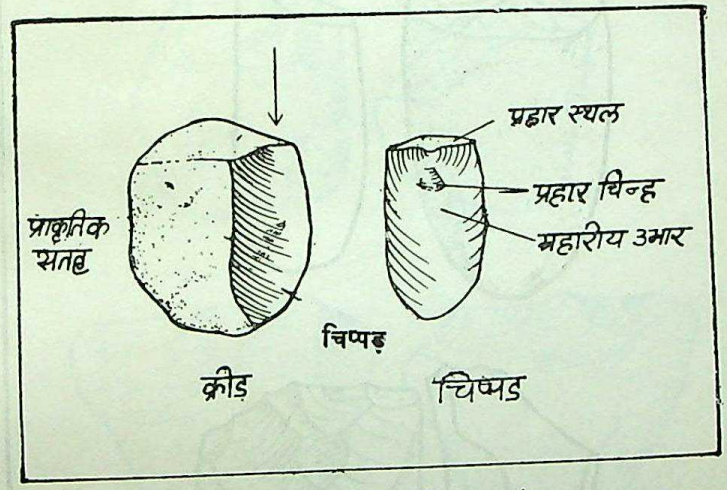

10. क्रोड़ व चिप्पड़ के मुख्य अंग

जाता है। इन वर्गों के नाम सम्भावित उपयोगिता के आधार पर रखे गए हैं।

कुट्टव्यक वह प्रारम्भिक उपकरण है जो कि पाषाण गुटिका पर पाषाण हथौड़े की मार द्वारा बनाया जाता था। एक या अधिक चिप्पड़ों की एक सतह से निकले खुट्ठल धार वाले ये उपकरण बिना तराशे गोल भाग से पकड़ कर काटने व चीरने के काम में लाए जाते थे।

कुट्टन्तिक उपकरणों की भी सम्भवतः ऐसी ही उपयोगिता था तथा वह कुट्टव्यक की तुलना में तेज धार वाला उपकरण था; क्योंकि धार बनाने के लिए दोनों सतहों पर चिप्पड़ों को पाषाण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

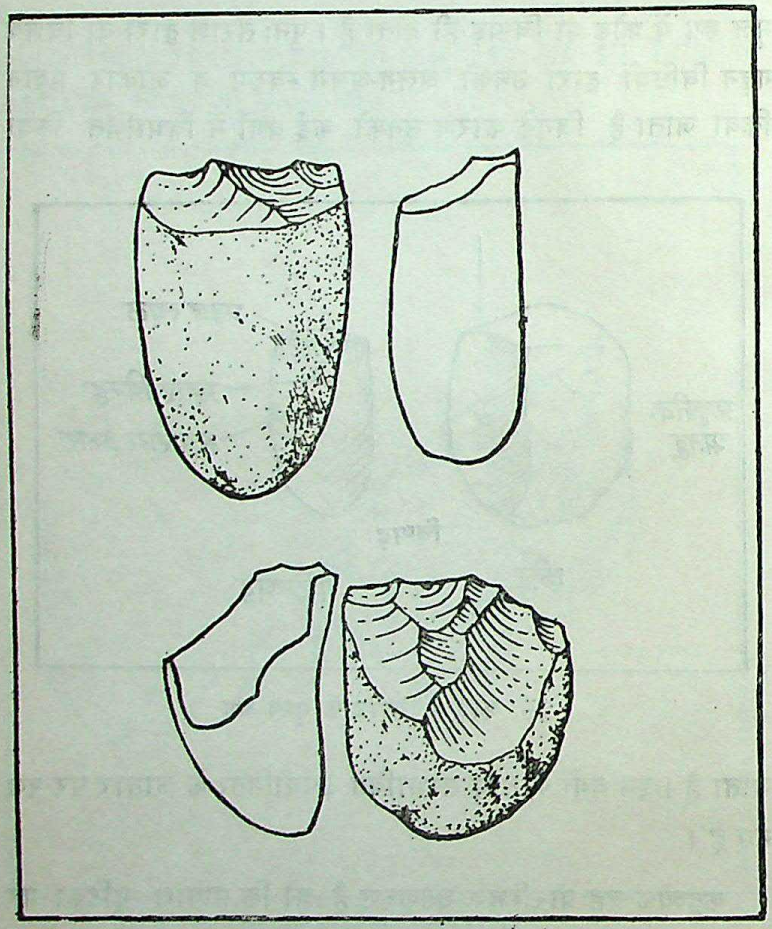

11. कुट्टव्यक उपकरण

हथौड़ों से तोड़ा जाता था। फलस्वरूप इन उपकरणों पर लहरियादार धार मिलती हैं।

मानवकृत ये प्राचीनतम उपकरण अफ्रीका के ऑल्डोवॉन संस्कृति, दक्षिण-पूर्व एशिया व भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिम भाग में विशद्ध स्वरूप में प्राप्त होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

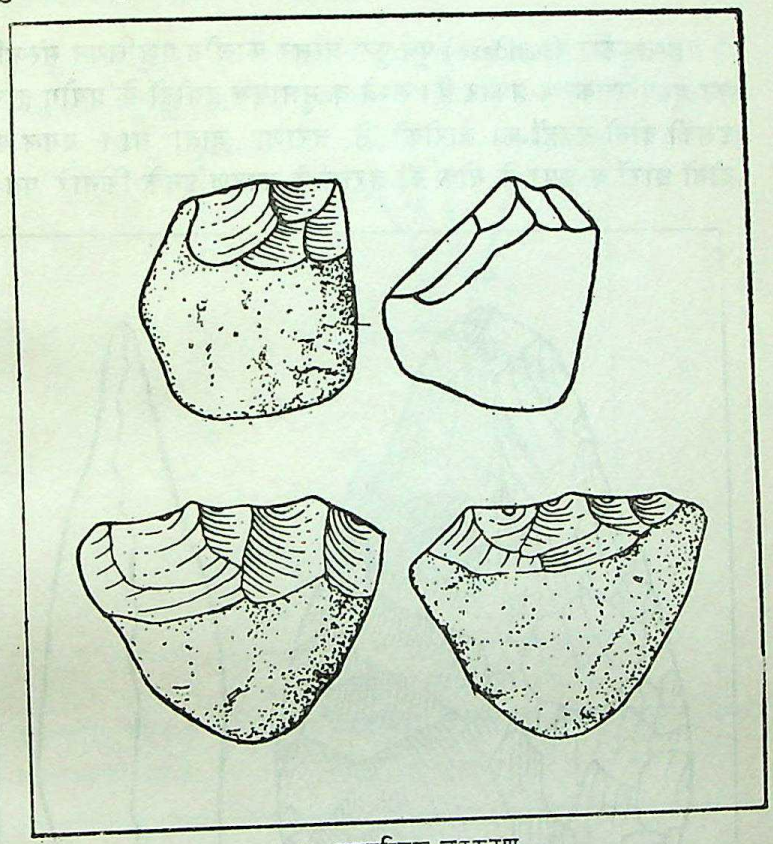

12. कुट्टन्तिक उपकरण

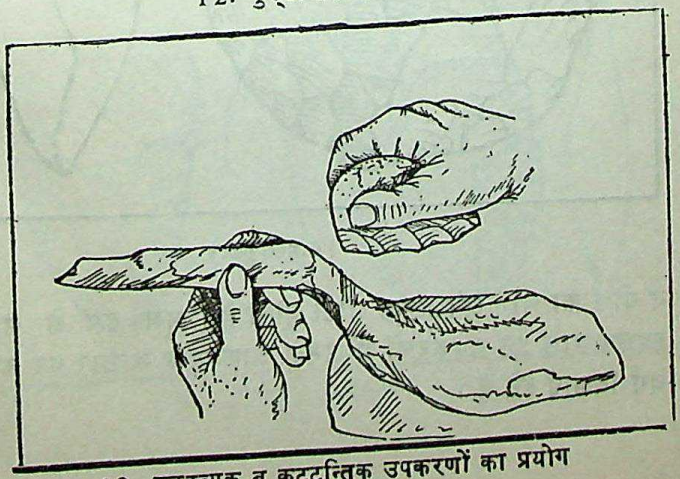

13. कुट्टव्यक व कुट्टन्तिक उपकरणों का प्रयोग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हस्तकुठार (handaxe) पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन एशूलियन संस्कृति का मुख्य उपकरण प्रकार हैं। लम्बे व मुलायम हथौड़ों के प्रयोग द्वारा इसकी दोनों सतहों को बारीकी से तराशा जाता था। बगल की दोनों धारों व ऊपर के नोक की तराश के कारण इनके किनारे पतले

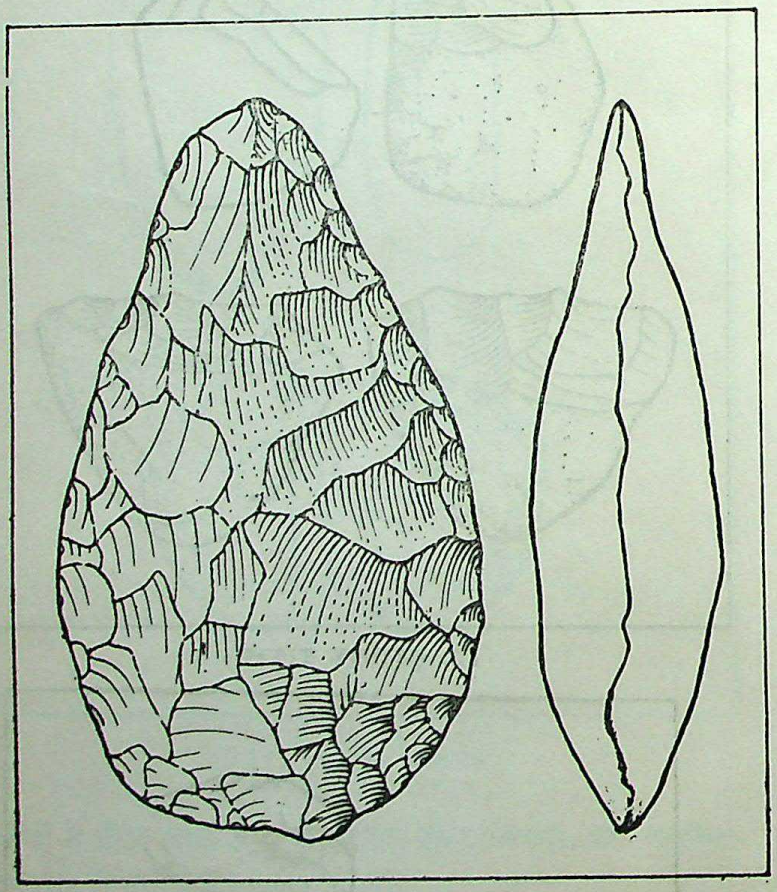

14.हस्तकुठार

व बीच का भाग अपेक्षाकृत मोटा होता है। मूल रूप से अण्डाकार स्वरूप वाले इन उपकरणों में उनके आकार के आधार पर कई उप-वर्ग दिखाई देते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हस्त कुठार की उपयोगिता के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। सम्भवतः यह बहु उपयोगी उपकरण था जिसमें तेज किनारों से खुरचने

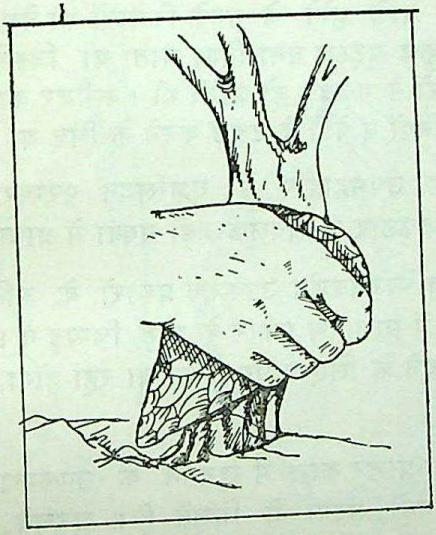

15. हस्तकुठार का प्रयोग

का काय, नोक से तोड़ने या फोड़ने व खोदने का काय सम्पन्न किया जा सकता था।

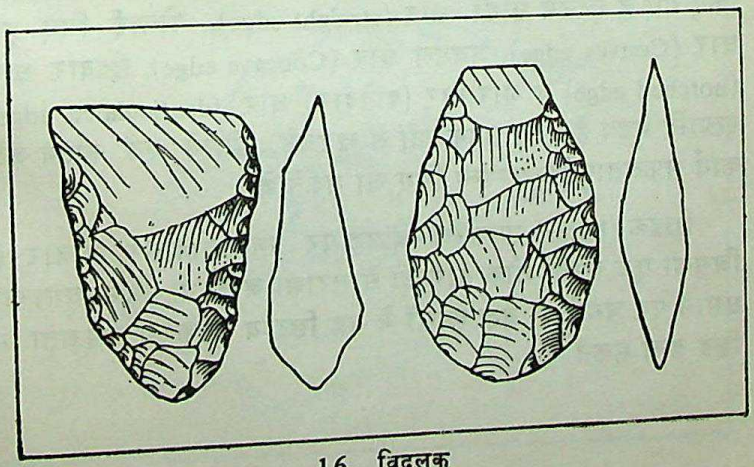

16. विदलक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एशूलियन संस्कृति का दूसरा विशेष उपकरण प्रकार विदलक (Cleaver) है। विशेष तैयार किए बड़े चिप्पड़—जो कि कुल्हाड़ी जैसे चौड़ी धार वाले होते थे उनके किनारों को बेलनाकार हथौड़ों से तराश कर कुछ खुट्ठल बना दिया जाता था जिसके कारण इनकी पकड़ किनारों से मजबूत हो जाती थी। क्लीवर का प्रयोग सम्भवतः वृक्ष की टहनियों व पेड़ों के टुकड़े करने के लिए था।

भारतीय उपमहाद्वीप में एशूलियन परम्परा के यह दोनों उपकरण हस्तकुठार व विदलक बड़ी संख्या में प्राप्त होते हैं।

उपरोक्त चार विशेष उपकरण प्रकारों के अतिरिक्त पूर्व पुरा-प्रस्तर काल में साधारण प्रकार के क्रोड़, चिप्पड़ व धार वाले चिप्पड़ जिनको खुरचने के लिए प्रयोग किया जा रहा होगा, भी प्राप्त होते हैं।

मध्य पुरा-प्रस्तर काल में खुरचने के उपकरण या छोलनियाँ (scrapers) बड़ी संख्या में मिलते हैं। खुरचने का यह उपकरण सामान्यतः मध्यम आकार के चिप्पड़ों से बनता है। एक या अधिक किनारों को बारीकी से तराशकर (retouching) पैना बनाया गया है। इन उपकरणों के उप-वर्ग उनकी धार के आकार पर विभाजित किए गए हैं जिनमें सीधी धार (straight edge), गोलाई लिए हुए धार (Convex edge), अवतल धार (Concave edge), छेददार धार (notched edge) व आरीदार (दांतेदार) धार (denticulated edge) इत्यादि मुख्य हैं। इन उपकरणों से खुरचने, छीलने एवं काटने जैसे कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न किए जा सकते थे।

छिद्रक (borer) उपकरण चिप्पड़ पर बना नोकदार औजार है जिसकी एक लम्बी नोक बारीकी से तराशी जाती थी। घुमा-घुमा कर धसाने पर चमड़े या वृक्ष छालों में यह छिद्रव्य उपकरण सफलता से छिद्र बना सकते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

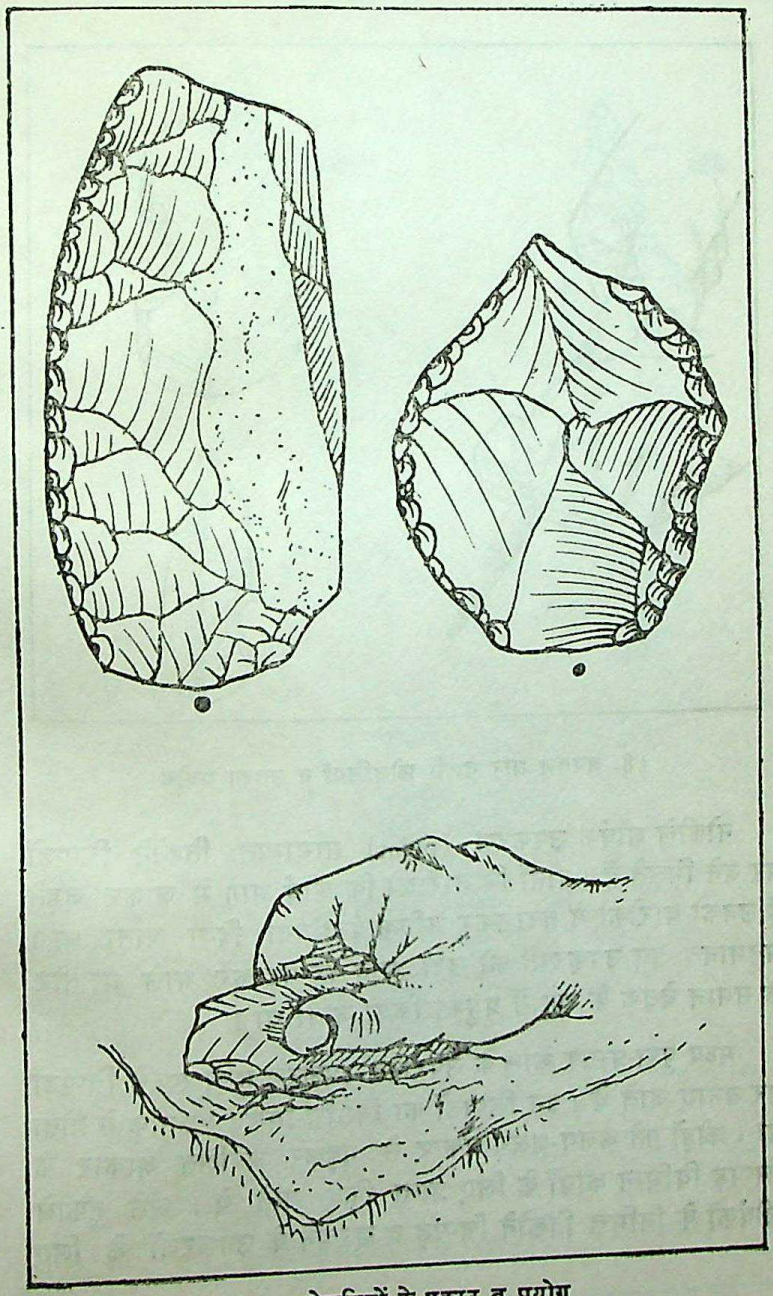

17. छोलनियों के प्रकार व प्रयोग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

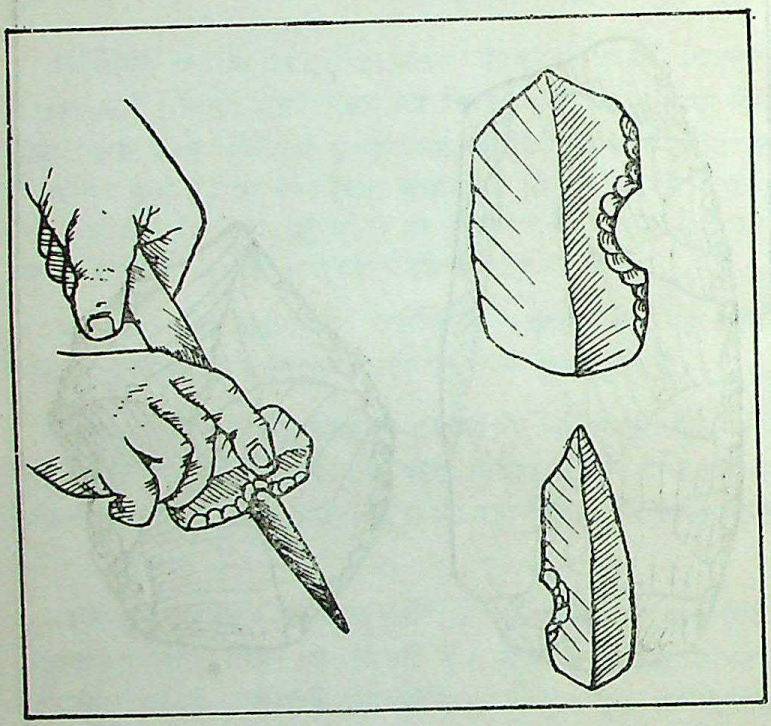

18. अवतल धार वाली छोलनियाँ व उनका प्रयोग

नोकीले शीर्षक उपकरण (point) सामान्यतः तिकोने चिप्पड़ों पर बने मिलते हैं। दोनों किनारे जो कि शीर्ष भाग में जाकर जुड़ते हैं उनको बारीको से तराशकर अधिक पैना बना दिया जाता था। अनुमानतः इन उपकरणों को छड़ो आदि पर मढ़ कर भाले या तीर के समान बेधक के रूप में प्रयुक्त किया जाता था।

मध्य पुरा-प्रस्तर काल के उपरोक्त उपकरण मुख्य रूप से चिप्पड़ों पर बनाए जाते थे। इन चिप्पड़ों का निर्माण विशेष तकनीक से होता था। क्रोड़ों को अलग-अलग प्रकार से गढ़कर अपेक्षित आकार के चिप्पड़ विभिन्न कार्यों के लिए प्राप्त किए जाते थे। जैसे नुकोले शीर्षकों के निमित्त तिकोने चिप्पड़ व खुरचने के उपकरणों के लिए

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri Preservation Foundation, Chandigarh

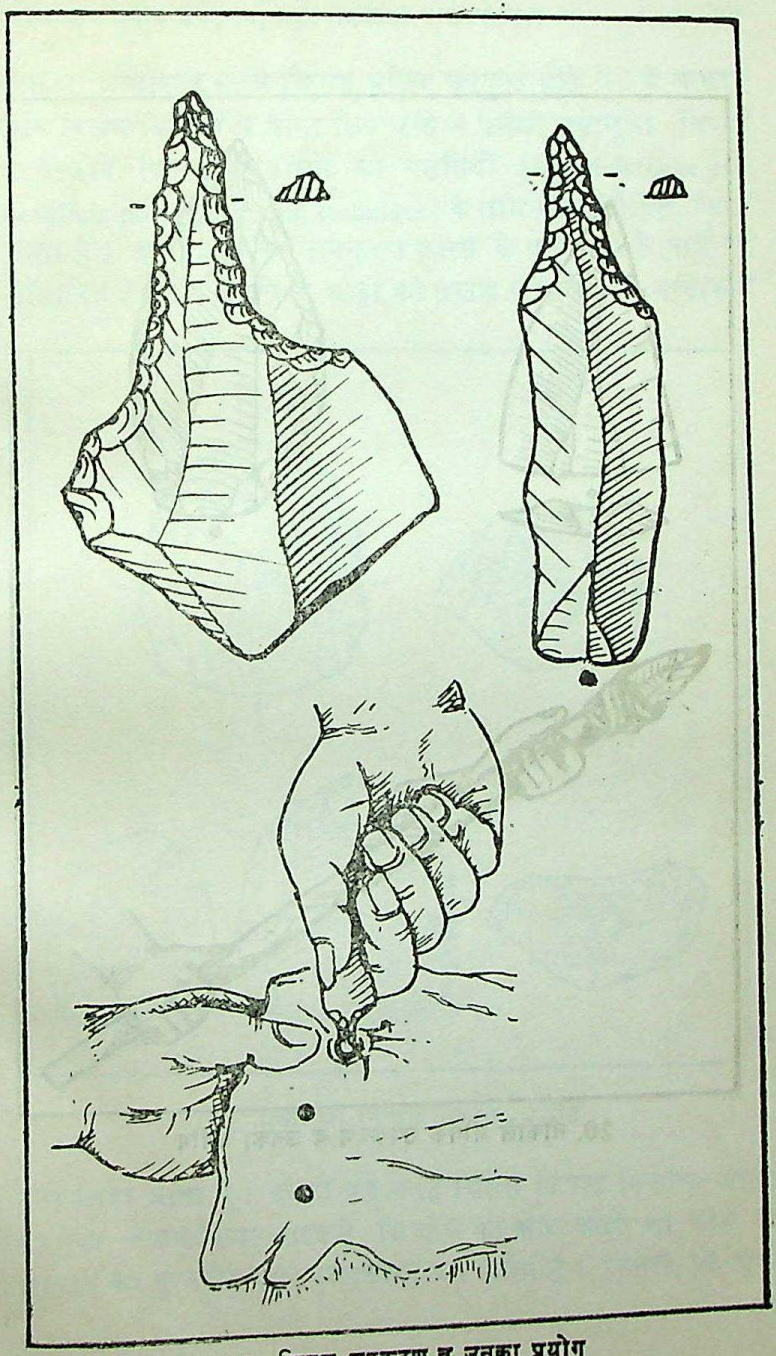

19. छिद्रक उपकरण व उनका प्रयोग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

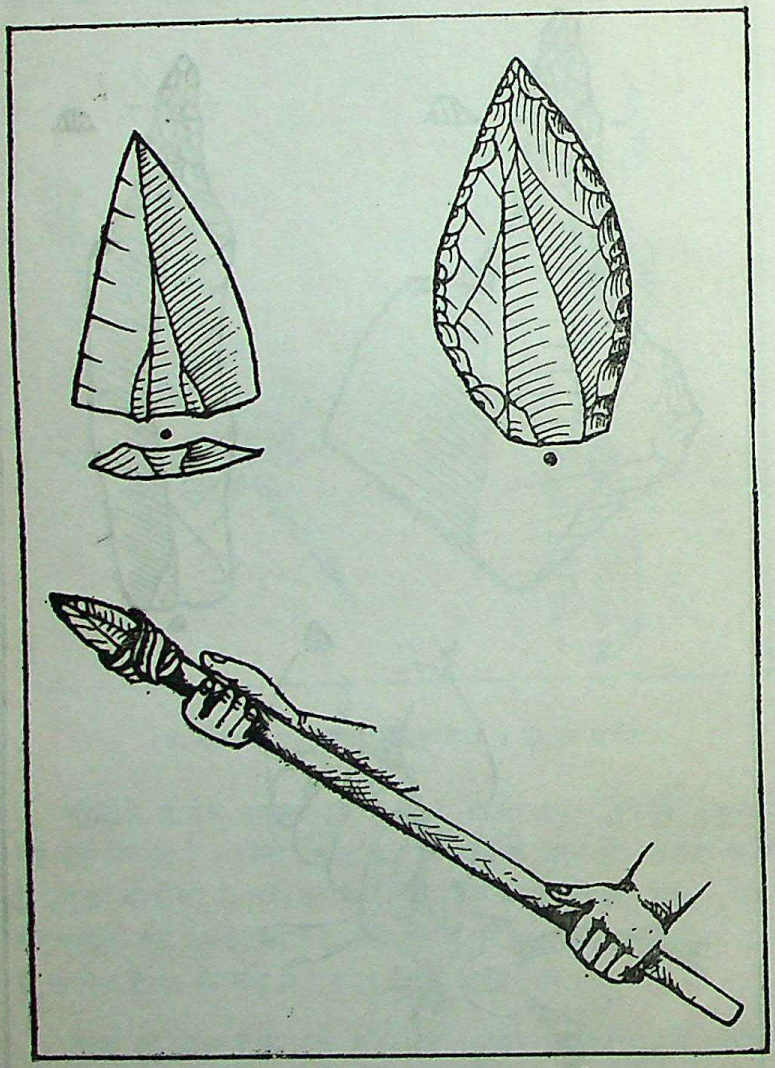

20, नोकीले शीर्षक उपकरण व उनका प्रयोग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गोल या अण्डाकार पतले चिप्पड़ अधिक उपयुक्त होते थे। ये आकार जिन विशेष विधियों से प्राप्त किए जाते थे उनको लवालुआ चिप्पड़ व तिकोने चिप्पड़ निकालने को पद्धतियों (Levallois flake and Levallois point detaching technique) के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस पद्धति का नामकरण फ्रान्स के एक स्थल के नाम पर आधारित है। इस पद्धति में क्रोड़ों को तराश कर गोल या अण्डाकार

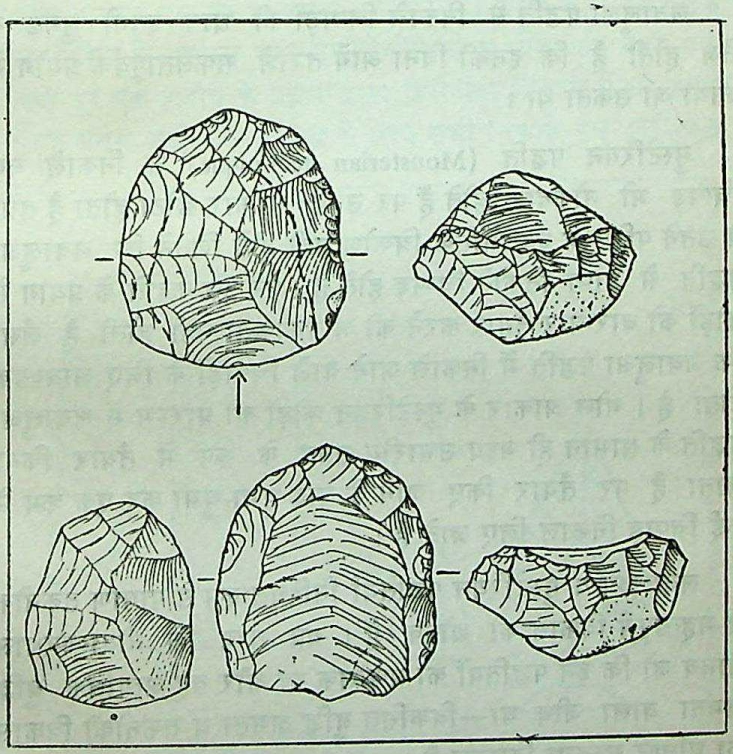

21. लवालुआ चिप्पड़ निकासन पद्धति

बना लिया जाता है। इनकी वह सतह जिससे चिप्पड़ निकाला जाना है, ऐसा तैयार किया जाता है कि बीच का भाग कछुए की पीठ के आकार का गुम्बदीय (गजपृष्ठाकार) बन जाता है। किनारे से एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपयुक्त स्थान पर प्रहार से लम्बा-गोल आकार का चिप्पड़ निकल जाता है। परन्तु तिकोने चिप्पड़ों के लिए आयताकार या तिकोने क्रोड़ों को ऐसा तैयार करना पड़ता है कि प्रयुक्त सतह पर मध्य में एक खड़ी कटक (mid-ridge) बन जाए। इस कटक के सहारे किनारे से प्रहार करने पर क्रम से कई तिकोने चिप्पड़ उपलब्ध किए जा सकते हैं।

लवालुआ पद्धति से निकाले चिप्पड़ों की धार इतनी सुगढ़ व तेज होती है कि इनको बिना आगे तराशे सफलतापूर्वक प्रयोग में लाया जा सकता था।

मुस्टेरियन पद्धति (Mousterian technique) से निकाले गए चिप्पड़ भी नोकदार होते हैं पर उनका आकार छोटा होता है तथा वे उतने परिपक्व ज्यामितिक त्रिकोण नहीं होते जितने कि लवालुआ पद्धति से प्राप्त तिकोने चिप्पड़ होते हैं। पर इस पद्धति के प्रयोग से क्रोड़ों को बार-बार तैयार करने की आवश्यकता नहीं होती है जैसा कि लवालुआ पद्धति में निकाले जाने वाले चिप्पड़ों के लिए आवश्यक होता है। गोल आकार के मुस्टेरियन क्रोड़ों को प्रारम्भ में लवालुआ पद्धति के सामान ही मध्य उभारीय सतह के रूप में तैयार किया जाता है पर तैयार किए जाने के बाद घुमा-घुमा कर एक क्रम में कई चिप्पड़ निकाल लिए जाते हैं।

लवालुआ व मुस्टेरियन पद्धतियाँ निश्चित रूप से पाषाण तकनीक में महत्वपूर्ण विकास की द्योतक हैं। यह तथ्य कि नीयाण्डरथाल मानव जो कि इन पद्धतियों का प्रचालक था और वह अत्यधिक बुद्धि क्षमता वाला जीव था—विकसित बुद्धि क्षमता व तकनीकी विकास का घनिष्ट सम्बन्ध दिखाता है।

उच्च पुरा-प्रस्तर काल में चिप्पड़ों की एक विशेष परम्परा का प्रचलन हुआ जिसको छुरी-फल कहते हैं। ब्लेड समानान्तर दो धारों वाले लम्बे, संकरे व पतले चिप्पड़ हैं जिनके मध्य में एक या अधिक कटक (ridge) बने होते हैं। प्रारम्भ में बड़े आकार के छुरी-फल प्राप्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होते हैं पर कालान्तर में बहुत छोटे छुरी-फल जिनको लघु छुरी-फल (bladelet) कहा जाता है, प्रचलित हुए।

छुरी-फल प्राप्ति की विधि उपरोक्त अन्य चिप्पड़ निकालने को विधियों से बिल्कुल भिन्न है। बारीक कणों वाले पाषाण के खण्ड या गुटक को पहले सिरों पर से तोड़ कर समतल बना लिया जाता था। इन समतल सिरों से क्रोड़ की लम्बाई में किसी एक किनारे पर खड़ा समकोण बनाता एक उभरा कटक तराश लिया जाता था। इस कटक के सहारे सिर के समतल भाग पर नोकीले शृंग भाग को दबा कर या उस पर एक हथौड़े के प्रहार द्वारा छुरी-फल निकाल लिया जाता था। यह प्रथम छुरी-फल व बाद के अन्य सभी निकाले गए छुरी-फल

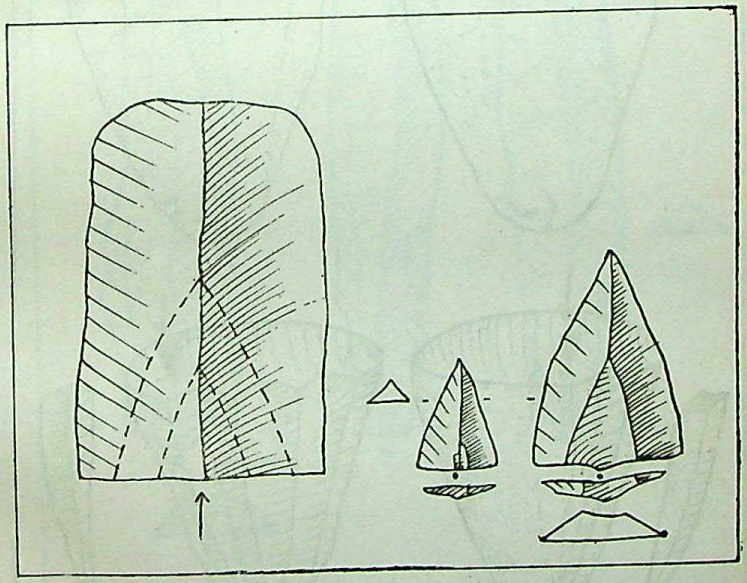

22. नोकीले चिप्पड़ प्राप्त करने की लवालुआ पद्धति

क्रोड़ों पर दो नए कटकों का निर्माण करते रहते हैं और प्रत्येक कटक एक छुरी फल निर्माण में सहायक होता है। अतः क्रोड़ को घुमा-घुमा कर एक के बाद एक छुरी-फल क्रम से प्राप्त किए जा सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अतः श्रम व पाषाण खण्ड की अधिकतम उपयोगिता की दृष्टि से पहली सभी पद्धतियों की तुलना में छुरी-फल निकालने की पद्धति सबसे अधिक अल्पव्ययी है।

क्योंकि छुरी-फल के दोनों बगल के किनारे तेज़ धार वाले होते हैं अतः पकड़ की सुविधा के लिए एक धार को बारीक तराश द्वारा

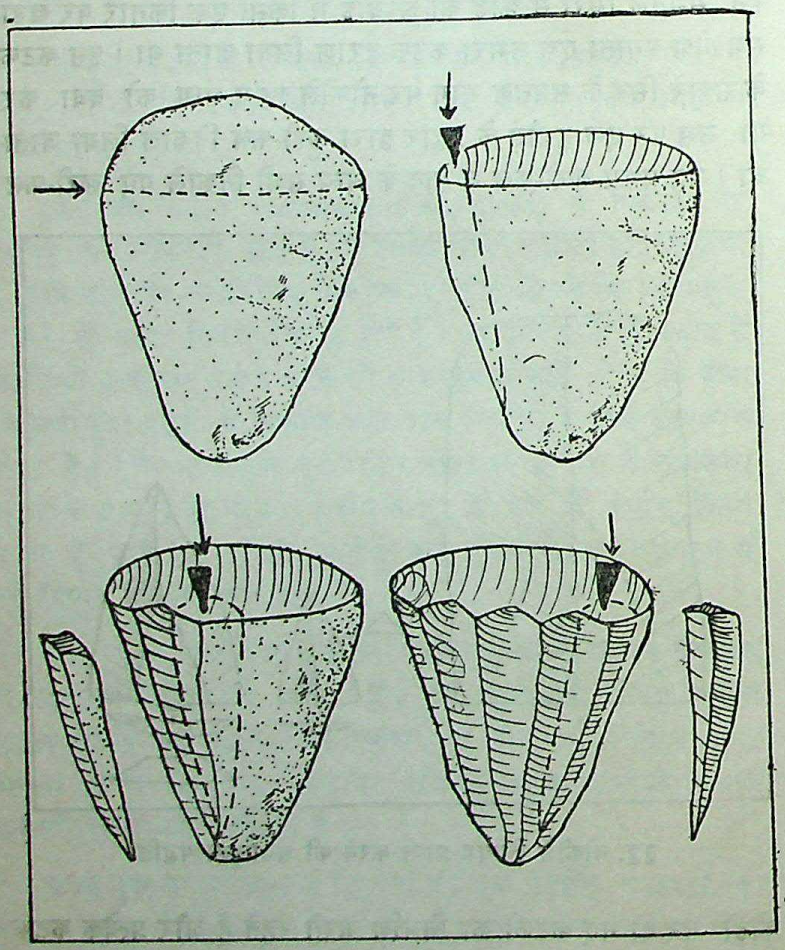

23. छुरी-फल निकासन विधि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खुट्ठल (blunt) कर दिया जाता था। अतः छुरी-फल से बने चाकुओं की अधिकता उच्च पुरा-प्रस्तर काल में होती है। इन चाकुओं

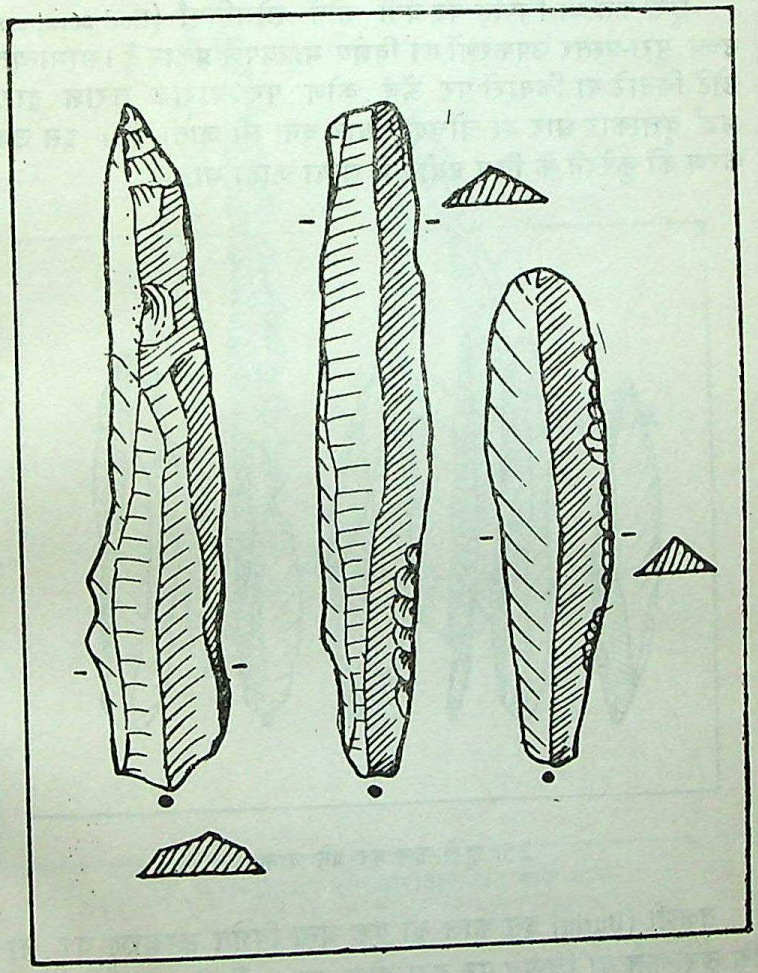

24. छुरी-फल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(knife) के कई आकार प्राप्त होते हैं एवं उनका उपयोग काटने, तराशने के कार्यों के लिए अनुमानित है।

छुरी-फल या चिप्पड़ पर बनी शीर्ष छोलनियाँ (End scrapers) उच्च पुरा-प्रस्तर उपकरणों का विशेष महत्वपूर्ण प्रकार हैं। सामान्यतः छोटे किनारे या किनारों पर ऊँचे कोण पर बारीक तराश द्वारा अर्द्ध वृत्ताकार धार या चोंचदार धार बना ली जाती थी। इस उपकरण को कुरेदने के लिए प्रयोग में लाया जाता था।

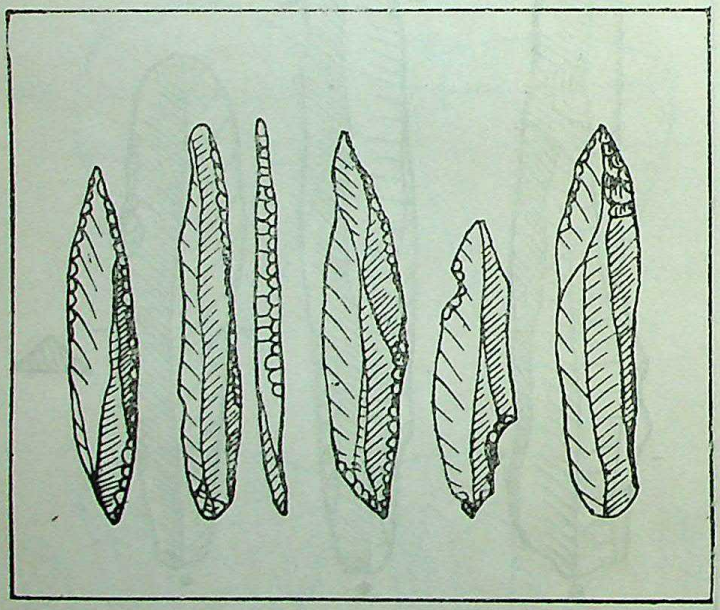

25. छुरी-फल पर बने चाकू

तक्षणी (Burin) इस काल का एक अन्य विशेष उपकरण था जो कि छुरी-फल या चिप्पड़ पर बना होता था। किसी एक छोर या किनारे को बारीकी से तोड़ कर एक छोटी छेनी की तरह की धार प्राप्त कर ली जाती थी। यह विशेष धार इन उपकरणों पर एक या एक से अधिक प्रकार की—यथा सीधी, घूमी, धँसी या चोंच जैसी हो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

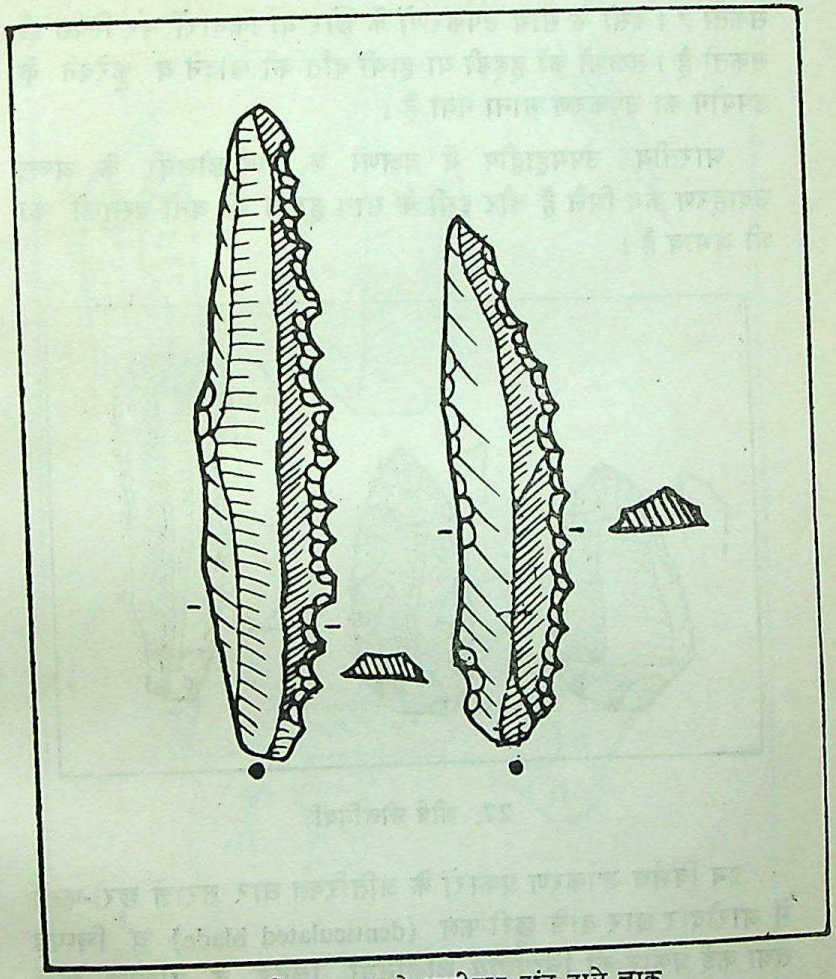

26. छुरी-फल पर बने आरीदार दांत वाले चाकू

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सकती है। इसी के साथ उपकरणों के छोर या किनारों पर स्थित हो सकती है। तक्षणो को हड्डी या हाथी दाँत को खोदने व कुरेदने के उपयोग का उपकरण माना गया है।

भारतीय उपमहाद्वीप में तक्षणी व शीर्ष-छोलनी के अच्छ उदाहरण कम मिले हैं और इसी के साथ हड्डी की बनी वस्तुओं का भी अभाव है।

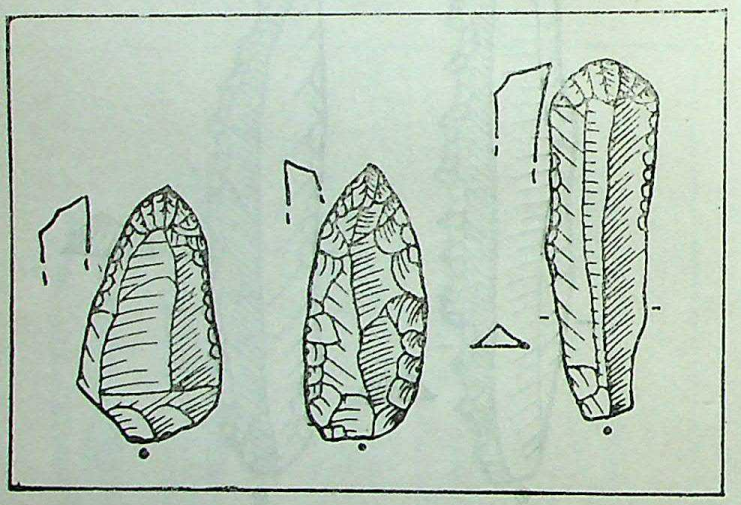

27. शीर्ष छोलनियाँ

इन विशेष उपकरण प्रकारों के अतिरिक्त धार तराशे छुरी-फलों में आरीदार धार वाले छुरी-फल (denticulated blade) व चिप्पड़ तथा कई प्रकार की चिप्पड़ीय छोलनियाँ, छिद्रक व नोकीले शीर्ष उपकरण भी उच्च पुरा-प्रस्तर युग की संस्कृतियों के प्राप्त अवशेषों में पाए जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

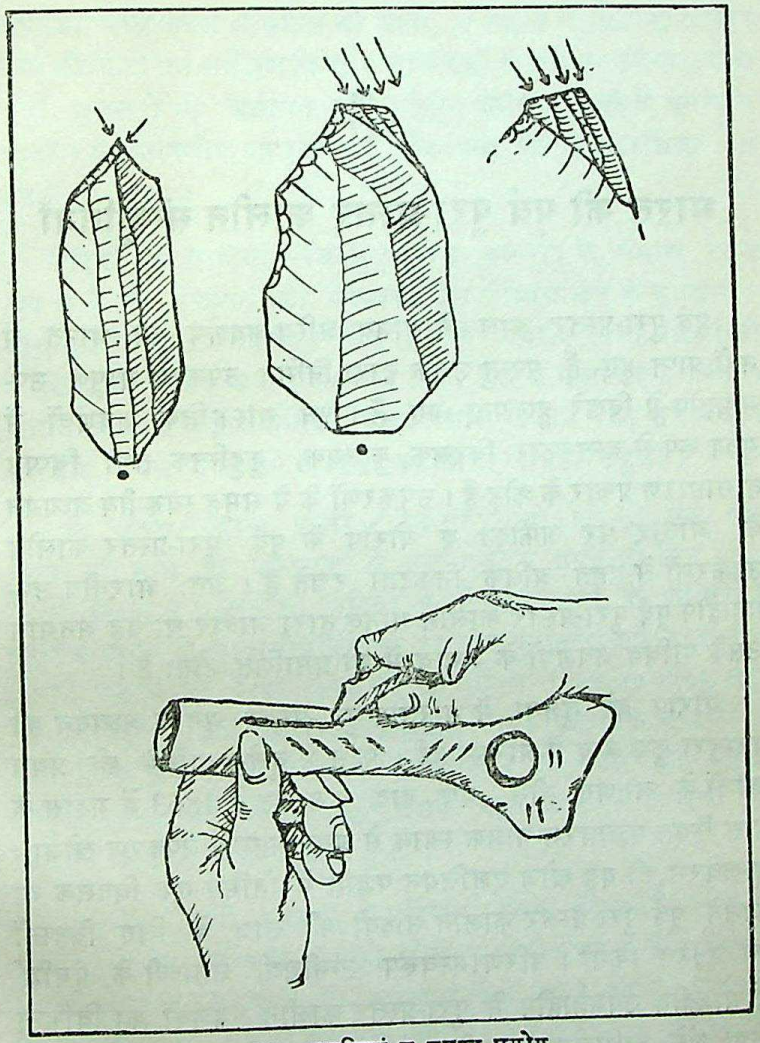

28. तक्षनियां व उनका प्रयोग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3

भारत की पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियाँ

पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के मानव अस्थि-अवशेष तो भारत में नहीं प्राप्त हुए हैं, परन्तु उसके द्वारा निर्मित उपकरण सम्पूर्ण उप-महाद्वीप में बिखरे हुए पाए गए हैं। इन सांस्कृतिक अवशेषों में मुख्य रूप से हस्तकुठार, विदलक, कुट्टव्यक, कुट्टन्तिक तथा चिप्पड़ व साधारण प्रकार के क्रोड़ हैं। उपकरणों के ये समूह स्वरूपीय अध्ययन के आधार पर अफ्रीका व योरोप के पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरणों से बहुत अधिक निकटता रखते हैं। अतः भारतीय उप-महाद्वीप पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन मानव द्वारा आबाद था यह अनुमान उसके पार्थिव अवशेषों के अभाव में भी प्रमाणित होता है।

योरोप की तुलना में भारतीय पुरा-प्रस्तर युग के अध्ययन की परम्परा कुछ बाद में प्रारम्भ हुई। फ्रांस में बुशे-द-पार्थिये की प्रथम खोजों के लगभग तीस वर्ष बाद ब्रुस फुट ने 1863 में मद्रास के पास स्थित पल्लवरम नामक स्थान से प्रथम पाषाण उपकरण खोजा। पल्लवरम की यह खोज एशूलियन पद्धति में निर्मित एक विदलक था जिसने पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन साक्ष्यों की खोज के लिए विद्वानों को प्रेरित किया। परिणामस्वरूप उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारतीय उपमहाद्वीप में पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेषों का विभिन्न क्षेत्रों जैसे तामिलनाडु, उड़ीसा, आन्ध्र, राजपुताना, उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश से अच्छा संकलन प्रकाश में आया।

उपकरण संकलन की प्रवृत्ति को वैज्ञानिक दृष्टिकोण 1932 में येल व केम्ब्रिज विश्वविद्यालयों के एक संगठित विशेषज्ञ दल ने प्रदान किया। इस दल ने भारत के उत्तर पश्चिम की पर्वतीय नदी-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घाटियों, मध्य प्रदेश में नर्मदा की घाटी, व मद्रास के पास कोर्टलयार नदी की घाटी का सर्वेक्षण किया। उपकरणों के प्राप्ति-स्तर व समीपवर्ती भू-स्तरों के अध्ययन द्वारा प्राचीन जलवायु चक्रों के प्रमाण व प्राचीन वातावरणीय पहलुओं की पुर्नकल्पना की आधारशिला इस दल ने ही रखी।

नदियों की घाटियां—जिनमें प्राचीन जलवायु के प्रमाण स्पष्ट रूप से हैं, के अध्ययन की परम्परा येल-कैम्ब्रिज दल के सर्वेक्षण के साथ प्रचलित हुई। विभिन्न विशेषज्ञों ने लगभग सभी नदियों की घाटियों का क्रमिक रूप से अध्ययन किया जिसके फलस्वरूप न केवल प्रतिनूतन काल के साँस्कृतिक अवशेष प्रकाश में आए वरन् समकालीन जलवायु व पशु जगत की रूपरेखा का खाका भी तैयार हुआ।

इन सर्वेक्षणों द्वारा प्रस्तर युगीन संस्कृतियों को तो एक क्रम मिला ही साथ ही उपकरणों के सन्तोषजनक संग्रह भी किए गए। पिछले शतक में नदियों की घाटियों में स्थित स्थलों के अतिरिक्त प्राचीन मानव के आवासीय प्रमाणों की ओर पुरातत्वविदों का झुकाव हुआ। इस प्रयास द्वारा उपकरण गढ़न-स्थल (factory site), खुले आवास स्थल (open air habitation site) तथा प्राकृतिक गुफाओं व शैलगृहों के जमावों का अध्ययन किया गया। इन स्थलों का महत्व प्राचीन मानव के व्यवहार एवं उसके रहन-सहन के तरीकों के अध्ययन के लिए विशेष रूप से है।

उपरोक्त सभी प्रयासों के परिणामस्वरूप केवल सिन्ध तथा गंगा-यमुना के दोआब के क्षेत्र को छोड़कर सम्पूर्ण भारत से पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के उपकरणों की सफलतापूर्वक खोज की गई। तथाकथित नदियों की घाटियों से इन अवशेषों के अभाव का कारण इस क्षेत्र की भू-भौतिकी संरचना है। नूतन काल में मिट्टी की मोटी परत के जमाव के कारण इस क्षेत्र से प्रतिनूतन काल के सांस्कृतिक अवशेषों को न तो प्राप्त किया जा सका हैं और न ही इनकी प्राप्ति की सम्भावना ही है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के इस व्यापक विस्तार क्षेत्र से प्राप्त स्थलों को भौगोलिक परिवेश की दृष्टि से चार मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, जो निम्नलिखित हैं—

(क) प्राकृतिक गुफा या शैलगृहों के स्थल
(ख) घाटियों में स्थित खुले आवास स्थल
(ग) उपकरण गढ़न-स्थल
(घ) नदियों के जमाव वाले स्थल

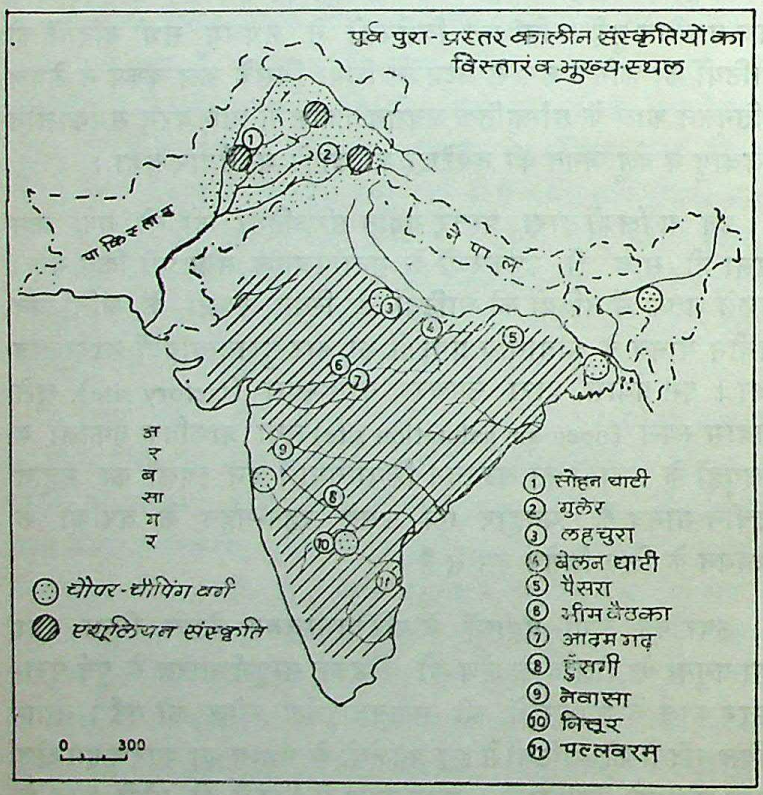

29. पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियों का विस्तार व मुख्य स्थल

पूर्व पुरा प्रस्तर युग के इतिहास के निर्माण में प्रत्येक वर्ग के स्थलों का भिन्न-भिन्न प्रकार का योगदान है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(क) प्राकृतिक गुफाओं एवं शैलगृहों का प्रयोग आदि मानव ने मुख्य रूप से अल्पकालीन आश्रय स्थलों के रूप में प्राकृतिक प्रकोपों से बचने के लिए किया होगा ; क्योंकि इन स्थलों के अन्दर तथा मुख भाग से जो जमाव प्राप्त होते हैं उनमें अलग-अलग स्तरों में दबे उपकरणों के समूह प्राप्त होते हैं जो एक से अधिक पुरा-प्रस्तर कालीन परम्पराओं के हैं।

भारतीय उपमहाद्वीप में इस वर्ग के स्थल अन्य तीन वर्गों के स्थलों की तुलना में अपेक्षाकृत कम हैं। छोटी पहाड़ियों के ऊपर स्थित इन स्थलों में प्राकृतिक कटाव के कारण गहरे खोह बन जाते हैं। कई बार कटाव के कारण चट्टान का ऊपरी भाग छत्राकार बन जाता है जो नीचे की चट्टानीय फर्श को ढककर आश्रय स्थल बना देता है। तीन ओर से खुले इन शैलगृहों का प्रयोग आसानी से आवास के लिए किया जा सकता है।

इस वर्ग के महत्वपूर्ण स्थलों में मध्य प्रदेश में भोपाल के पास स्थित भीम-बैठका व नर्मदा तट के पास आदमगढ़ और तामिलनाडु में मद्रास के पास स्थित गुडियम शैलगृह हैं। इन स्थलों के उत्खनन में निचले स्तरों से एशूलियन संस्कृतियों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। भीम-बैठका व आदमगढ़ शैलगृहों से एशूलियन स्तरों के ऊपर से मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियों के जमाव भी पाए गए हैं जबकि गुडियम से केवल एशूलियन परम्परा के ही प्रमाण प्राप्त हैं।

इन तीनों स्थलों के आसपास उपकरण गढ़ने योग्य पाषाण प्राकृतिक रूप से यथेष्ट मात्रा में प्राप्त होते हैं। भीम-बैठका में यह क्वार्टज़ाईट (quartzite) के खण्डों के रूप में प्राप्त होते हैं जबकि आदमगढ़ व गुडियम में यह इसी पाषाण की गुटिकाओं के रूप में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध था। अतः इस काल का मानव इस उपलब्ध माध्यम का प्रयोग उपकरणों को गढ़ने के लिए कर सकता था। गढ़न स्थल इन शैलगृहों के आसपास या बाहर प्राप्त होते हैं। अनुमानतः खुले जंगलों में जीवन-निर्वाह करने वाला यह मानव इन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शैलगृहों का आश्रय प्राकृतिक प्रकोपों से अपने बचाव के लिए लेता होगा। दुर्भाग्यवश इन शैलगृहों के आवासीय फर्शों (occupational floors) से हड्डियों, शृंगों या अन्य प्रमाणों का अभी तक अभाव है जिसके कारण पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन मानव के रहन-सहन सम्बन्धी अन्य अनुमान सम्भव नहीं हैं।

(ख) हाल की खोजों में एशूलियन संस्कृति के दो स्थल जो कि खुली घाटियों में स्थित हैं इस काल के इतिहास अध्ययन के लिए विशेष महत्वपूर्ण हैं। आन्ध्र प्रदेश में स्थित हूंसगी व बिहार में स्थित पैसरा ऐसे स्थल हैं जहाँ पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के खुले आवास के प्रमाण प्राप्त हुए हैं। आदि मानव आधारीय चट्टान (bed-rock) पर जीवन-निर्वाह कर रहे थे इसके स्पष्ट प्रमाण इन स्थलों पर उत्खननों से प्राप्त हुए हैं। समीपवर्ती क्षेत्र से उपलब्ध पाषाण खण्ड, पहाड़ी नालों एवं नदियों से पानी, घाटी के घने जंगलों से कन्द मूल व जानवर उनकी मूल जीवन आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ थे। हाल की खुदाईयों द्वारा पैसरा में तो इस बात के भी प्रमाण प्राप्त हुए हैं कि आश्रय हेतु साधारण आकार की छप्परनुमा झोपड़ियों का भी निर्माण एशूलियन मानव ने सम्भवतः किया था। खुदाइयों से पाषाण उपकरणों के साथ मुलायम चट्टान की अनुमानित फर्श पर स्तम्भ-गर्तों (Post-holes) के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं। इसके अतिरिक्त पाषाण के बड़े खण्डों को पंक्तिबद्ध करके भी सम्भवतः प्राकृतिक प्रकोपों से सुरक्षा के उपाय किए गए थे। प्रमाण के रूप में पैसरा में उत्खनन से साढ़े चार मीटर लम्बी पाषाण खण्डों की एक पंक्ति भी प्राप्त हुई है। रुचिकर बात यह है कि इन घाटियों में केवल एक ही समय का पुरा-पाषाण कालीन मानव (एशूलियन) वास कर रहा था क्योंकि यहाँ से बाद के सांस्कृतिक चरण-मध्य व उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेषों का अभाव है। एशूलियन काल के बाद ये घाटियां आवास के लिए क्यों अनुपयुक्त हो गईं या मानव दूसरे क्षेत्र में क्यों चला गया इसका कोई स्पष्ट उत्तर नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(ग) खुले परिवेश के स्थलों में उपकरण गढ़न-स्थलों का भी विशेष महत्व है। पर्याप्त मात्रा में उपयुक्त पाषाण ढेरों के निकट स्थित इन स्थलों पर उपकरणों के गढ़ने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। सम्पूर्ण रूप से तैयार किए गए उपकरणों के अतिरिक्त अधूरे या गढ़ने की प्रक्रिया में टूटे बेकार टुकड़े, चिप्पड़, क्रोड़, हथौड़े एवं बिना प्रयोग किए हुए पाषाण खण्डों की पर्याप्त संख्या प्राप्त होती है। कई बार एक ही स्थल पर एक ही पाषाण खण्ड के तराशे जाने के उपक्रम में निकले खण्ड व चिप्पड़ों को अगर उठाकर संग्रहीत किया जाए और पुनः उन्हें क्रम से जोड़ा जाए तो पाषाण के मूल स्वरूप को प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रमाण उपकरणों की गढ़न प्रविधि पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं।

गढ़न स्थलों का महत्वपूर्ण समूह इलाहाबाद व मिर्ज़ापुर जिलों में स्थित विन्ध्य पर्वतमाला की निचली ढलानों पर स्थित है। इस क्षेत्र में उपकरणों के लिए उपयोगी पाषाण बड़े व छोटे खण्डों में ऊपर से टूट-टूट कर ढलानों पर जमा हो गए हैं और इन खण्डों के प्राकृतिक जमाव के पास ही उपकरणों को गढ़ा गया है।

कई बार दक्खिन के पठारी भाग में पाषाण पट्टियों के रूप में वाँछित पाषाण माध्यम पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के मानव को उपलब्ध था। ऐसी स्थिति में जहाँ कही भी ये पाषाण पट्टियाँ (dykes) धरातल पर आ गई थीं उनके पास ही उपकरणों का गढ़न किया गया था। महाराष्ट्र में नेवासा व उत्तर प्रदेश में ललितपुर स्थानों से इस प्रकार के अच्छे उदाहरण प्राप्त हुए हैं।

तीसरी दशा में पाषाणों को नदियों की घाटियों में पहले के पट्टिकीय जमाव से भी प्राप्त किया जाता था। नर्मदा की घाटी में दुकाड़ी नाला, प्रवरा नदी की घाटी में चिरकी-नेवासा आदि इस प्रकार के उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

उपकरणों के तकनीक व गढ़न पद्धति एवं मानव के लिए ये क्रिया कलापों के अनुमान स्थलों का विशेष महत्व है परन्तु केवल इनसे संस्कृतियों का क्रम या तिथि-निर्धारण करना सम्भव नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस अध्ययन के लिए भू-भौतिक स्तरों के नीचे दबे उपकरणों को सहायता ली जाती है।

(घ) नदी की घाटियों में स्थित पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन स्थलों की संख्या और विस्तार का क्षेत्र काफी व्यापक है। हिमालय की तराई तथा दक्खिनी भारत में स्थित प्रायः सभी छोटी नदियों की घाटियों से प्रतिनूतन काल के अवशेष उत्खनन से प्राप्त होते हैं। इन नदियों में प्रतिनूतन काल के जलवायु चक्रों के प्रमाण दो अलग प्रकार की संरचना के रूप में प्राप्त होते हैं। हिमालय की तराई में जहाँ हिम युगों का प्रभाव प्रबल था, नदियों ने जमाव व कटाव प्रक्रियाओं द्वारा सोपानों (terraces) का निर्माण किया। दूसरी ओर पठारी व उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों में सामान्यतः यह जमाव पट्टिकीय जमाव और मिट्टी के जमाव (silt deposits) के रूप में प्राप्त होते हैं।

भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिम एवं उत्तर के क्षेत्र जो कि हिमालय पर्वत की तराई का भाग है, में नदियों की घाटियों में चार या पाँच सोपानों का निर्माण हुआ। सोहन नदी जो कि सतलुज की सहायक नदी है, के किनारों से प्रतिनूतन काल के जलवायु चक्रों द्वारा जमाव व कटाव की प्रक्रिया से निर्मित सोपानों का विद्वानों ने बारीकी से अध्ययन किया है। ऊपरी दो सोपान जोकि प्राचीनतम हैं, से पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरणों को सम्बन्धित किया गया है। बाद के सोपानों से क्रमशः परवर्ती संस्कृतियों के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

सोहन घाटी से मिलते-जुलते प्रमाण व्यास सिरसा, बनगंगा आदि नदियों की घाटियों से भी प्राप्त किए गए हैं। इन नदियों की घाटियों के भी प्राचीनतम सोपानों से पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेष प्राप्त होते हैं। ऊपरी दो सोपानों को भू-भौतिकीय स्तर विन्यास के आधार पर क्रमशः द्वितीय हिम प्रत्यावर्तन युग व तृतीय हिम युग का माना गया है।

उपकरणों का समूह, जिसको सोहन नदी के नाम के आधार पर "सोहन संस्कृति" की संज्ञा प्रदान की गई है, ये उपकरण कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक वर्ग के हैं। इस संस्कृति की एक विशेषता एशूलियन पद्धति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के उपकरणों का पूर्ण अभाव है। सोहन घाटी के कुछ स्थल जहाँ से एशूलियन संस्कृति के अवशेष प्राप्त हुए हैं वहां सोहन संस्कृति के उपकरणों का अभाव है।

उत्तर के पर्वतीय तराई क्षेत्र एवं दक्खिनी पठारी भाग का लगाव सिन्ध, गंगा व यमुना की घाटियों द्वारा होता है। नदियों के दोआब का यह भाग जिसको सिन्ध-गांगीय सपाट भू-भाग के नाम से सम्बोधित किया जाता है यहाँ नदियों द्वारा बहा कर लाई गई दोमट की मोटी परत का जमाव है। भू-भौतिकीय आधार पर यह जमाव नूतन काल का माना गया है। प्रतिनूतन काल के अवशेष यहां से प्राप्त नहीं हुए हैं।

दक्खिनी भारत जो प्राचीनतम संरचना वाला पठारी भाग है आज की ही तरह प्रतिनूतन काल में भी उष्णकटिबन्धीय जलवायु का क्षेत्र रहा है। अतः विश्व के अन्य उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों के समान यहाँ भी अति-वृष्टि व अल्प-वृष्टि जलवायु चक्रों का अस्तित्व था। छोटी-बड़ी नदियों की घाटियों के प्राचीन जमाव की संरचना से भी यहाँ के इन जलवायु चक्रों के अस्तित्व की पुष्टि होती है।

नर्मदा, गोदावरी, कृष्णा, महानदी जैसी बड़ी नदियों तथा भीमा, बेलन, घोड़ जैसी छोटी नदियों की घाटियों में पाषाण गुटिकाओं व मिट्टी के जमाव एक या अधिक परतों के रूप में प्राप्त होते हैं। इन जमावों को क्रमशः अति-वृष्टि व अल्प-वृष्टि से सम्बन्धित किया गया है। बेलन नदी जो कि उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर व इलाहाबाद जिलों को सींचती है, की घाटी में प्रतिनूतन काल के जमावों का इतिहास लगभग पूर्ण व सुरक्षित अवस्था में प्राप्त किया गया है। यहाँ तीन पाषाण गुटिकाओं के स्तरों का अलगाव बीच में बिछी मिट्टी की परतों द्वारा हुआ है। इन पाषाण गुटिकाओं के स्तरों को जमाव के क्रम के आधार पर क्रमशः नीचे से ऊपर तक प्रथम, द्वितीय व तृतीय कहा गया है। इन तीनों स्तरों में दबे पुरा-प्रस्तर काल के अवशेषों को तदनुसार तीन अति-वृष्टि कालों से सम्बन्धित किया गया है। गढ़न पद्धति व उपकरण के प्रकार विन्यास के आधार पर यह तीन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	जमावों का प्रकार	जलवायु - चक्र	सांस्कृतिक अवशेष
नूतन काल	① पीली दोमाट	अल्प - वृष्टी	मध्य प्रस्तर युगीन उपकरण
	② हल्की भूरी दोमाट	अल्प - वृष्टी	मध्य प्रस्तर युगीन उपकरण
	③ भूरी दोमाट	अल्प - वृष्टी	
	④ गुटिकीय जमाव III	अल्प - वृष्टी	उच्च पुरा - प्रस्तर कालीन उपकरण
	⑤ पीली दोमाट व बालू	अल्प वृष्टी	
प्रतिनूतन काल	⑥ गुटिकीय जमाव II	अति वृष्टी	मध्य पुरा - प्रस्तर कालीन उपकरण
	⑦ दोमाटें	अल्प = वृष्टी	
	⑧ गुटिकीय जमाव I	अति - वृष्टी	एशूलियन उपकरण
	⑨ गाढ़ी चट्टान खण्डों का जमाव	अल्प - वृष्टी	

30. बेलन व सेडती नद घटियों के जमाव व समकालीन संस्कृतियां

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपकरण समूह क्रमशः पूर्व, मध्य व उच्च पुरा-प्रस्तर काल की संस्कृति में आते हैं।

अन्य नदियों की घाटियों में प्रथम दो पाषाण गुटिका स्तर या बाद के दो या कभी-कभी केवल एक ही स्तर सुरक्षित मिलते हैं। इन क्षेत्रों में सामान्यतः इन स्तरों से ही सम्बन्धित सांस्कृतिक अवशेष भी प्राप्त होते हैं।

दक्खिन भारत में पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के अवशेष प्रथम पाषाण गुटिकाओं के जमावों से प्राप्त किए गए हैं। यह जमाव बाद के पाषाण गुटिका जमावों की तुलना में बड़े पत्थरों का है, तथा इसको अति-वृष्टि चक्रों में द्वितीय अति-वृष्टि चक्र, जिस समय अनुमानतः अत्यधिक वर्षा हो रही थी का परिणाम माना गया है। इन जमावों से प्राप्त कुछ प्रस्तरीकृत पशु हड्डियों के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं जिनको स्वरूप के आधार पर मध्य प्रतिनूतन काल का माना गया है। नर्मदा, भीमा व बेलन की घाटियों से प्राप्त इन पशु वर्गों में बैल, हाथी व घोड़ों के आदि स्वरूप के प्रमाण उल्लेखनीय हैं।

पाषाण उपकरणों के आधार पर संपूर्ण दक्खिनी पठार में मुख्यतः एशूलियन परम्परा में जीवन-निर्वाह करने वाले मानव का वास सम्भावित है। दक्खिन के पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेषों के प्रथम प्राप्ति क्षेत्र के नाम के आधार पर "मद्रास संस्कृति" की संज्ञा इस परम्परा को प्रदान की गई थी।

विकसित एशूलियन पद्धति से बनाए गए सुघड़ हस्तकुठार तथा विदलक उस संस्कृति की विशेषता है। साथ ही पाषाण हथौड़ों के प्रयोग द्वारा चिप्पड़ों की प्राप्ति जिनको बड़े व साधारण आकार की छोलनियों के रूप में भी गढ़ लिया जाता था इनके साथ पाई जाती हैं। पाषाण गुटिकाओं पर बने कुट्टव्यक व कुट्टन्तिक पर तराश के निशानों में भी लम्बे व मुलायम हथौड़ों का प्रयोग दिखाई पड़ता है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कुट्टव्यक व कुट्टन्तिक उपकरणों को उपयोगिता की दृष्टि से गढ़ा जाता था पर इनके बनाने की पद्धति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पूर्ण रूप से बदल गई; क्योंकि एशूलियन पद्धति का बहुत प्रचलन था

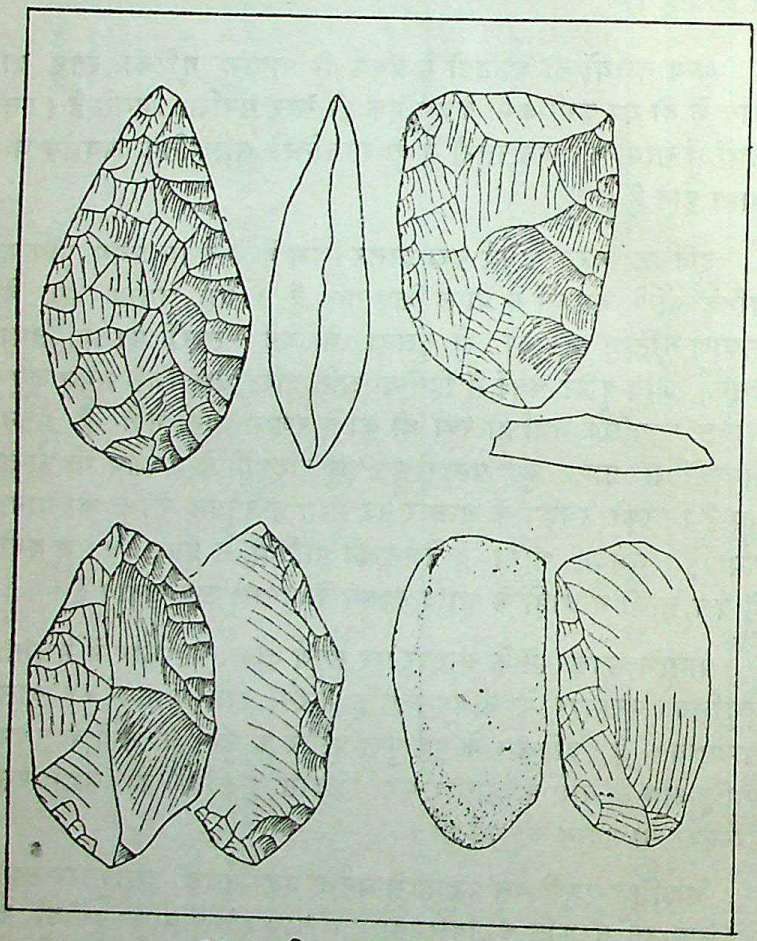

31. एशूलियन परम्परा के उपकरण

अतः उसके उपकरणों की तराश का भी अन्य उपकरणों पर प्रभाव पड़ा।

पूर्व पुरा-पाषाण कालीन उपकरण बड़े व खुरदुरे पत्थरों पर बने हैं जिनको नदी की घाटियों में गुटिकाओं या पर्वतों की ढाल से पाषाण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खण्डों के रूप में प्राप्त किया जाता था। अधिकतर क्षेत्रों में क्वार्ट-ज़ाईट तैयार उपकरण जैसे कुट्टव्यक, कुट्टन्तिक, हस्तकुठार, क्लीवर तथा कुछ सामान्य चिप्पड़ से बनी छोलनियों के अतिरिक्त क्रोड़ व चिप्पड़ भी मिलते हैं। चिप्पड़ों व क्रोड़ों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इनमें से कुछ पर गढ़न किया गया था। एशूलियन परम्परा में बने उपकरणों के साथ तैयार करके निकाले जाने वाले चिप्पड़ों की संख्या अधिक दिखाई पड़ती है। साथ ही उन क्षेत्रों में जहाँ उपकरण योग्य माध्यम टेढ़े-मेढ़े पाषाण खण्डों के रूप में प्राप्त होता था वहाँ भी चिप्पड़ों की प्राप्ति के लिए विशेष तैयारी की जाती थी।

प्रारम्भ में कुछ विद्वानों की यह धारणा थी कि पूर्व पुरा-प्रस्तर

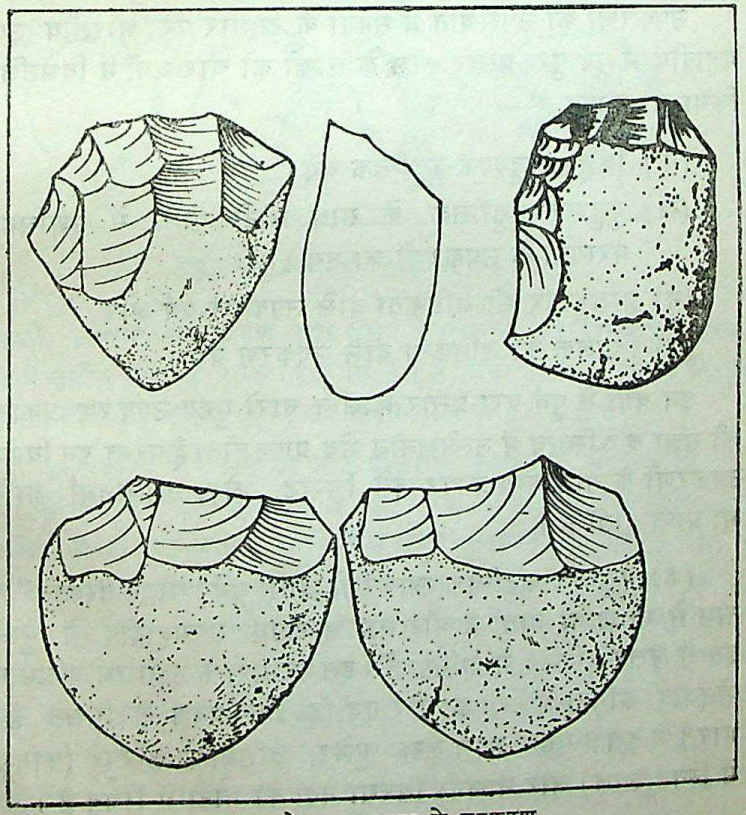

32. सोहन परम्परा के उपकरण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काल में मद्रास व सोहन संस्कृतियों का स्वतन्त्र अस्तित्व था । दो क्षेत्रों में स्थित, सोहन संस्कृति उत्तर-पश्चिम और उत्तर में एवं मद्रास संस्कृति दक्खिन में, बिना एक दूसरे क्षेत्र की स्थानीय विशेषताओं से प्रभावित हुए जीवित रही । कुछ समय बाद ये दोनों उपसंस्कृतियाँ अपने सीमित क्षेत्रों से बाहर फैलीं एवं मध्य भारत, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश में इनका एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित हुआ । इस मत के अनुसार इन संस्कृतियों को दो अलग-अलग जनसमूहों के अस्तित्व के प्रमाण के रूप में स्वीकार किया गया है । पर बाद की खोजों के आधार पर इन दो सांस्कृतिक वर्गों की धारणा की पुष्टि नहीं होती है ।

उपकरणों की उपस्थिति व संख्या के आधार पर भारतीय उप-महाद्वीप में पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के संग्रहों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(क) विशुद्ध कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक वर्ग ।

(ख) कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक के साथ छोटी मात्रा में एशूलियन परम्परा के उपकरणों का वर्ग ।

(ग) हस्तकुठार की अधिकता वाले उपकरण वर्ग और

(घ) विदलक की अधिकता वाले उपकरण वर्ग ।

इन वर्गों में पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन चारों मुख्य उपकरण प्रकारों की संज्ञा व अस्तित्व में उल्लेखनीय भेद प्राप्त होता है परन्तु इन विशेष उपकरणों के साथ अन्य प्रकार जैसे चिप्पड़, क्रोड़, छोलनियाँ आदि भी प्राप्त होती हैं ।

(क) कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक उपकरणों वाला वर्ग "सोहन संस्कृति" के नाम से भी जाना जाता है और यह भारतीय उपमहाद्वीप में मुख्य रूप से उत्तर-पश्चिम में केन्द्रित हैं । इस परम्परा के उल्लेखनीय प्रमाण पोतवार, काँगरा घाटी, कश्मीर एवं हिमाचल प्रदेश से मिलते हैं । भारत में इसके मुख्य स्थल ढ़ेरा, गुलेर, धलियारा, हीरपुर (कांगड़ा में स्थित स्थल) और नालगढ़ सिरसा नदी की घाटी में स्थित हैं ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri Siddhanta Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दक्खिनी भारत में इस परम्परा का अस्तित्व बहुत सीमित क्षेत्र में गिने-चुने स्थलों से ही ज्ञात है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश में बेतवा

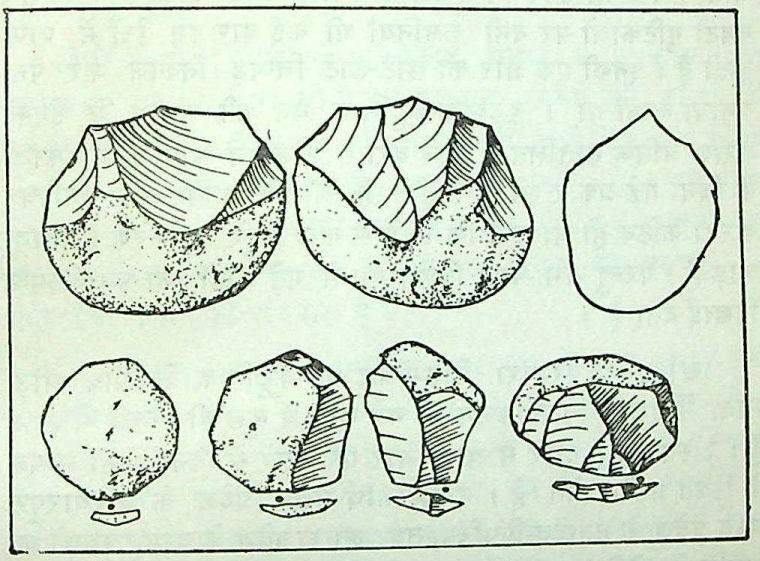

33. कुट्टन्तिक व उसके तराशी चिप्पड़

घाटी, कोंकण, मध्य प्रदेश तथा मैसूर में तुँगभद्रा की घाटियों से इसके उल्लेखनीय अवशेष प्राप्त किए गए हैं। तुँगभद्रा घाटी में स्थित नित्तूर स्थल सम्भवतः इस संस्कृति का सबसे दक्षिणी स्थल है।

इन स्थलों से पचास या साठ प्रतिशत उपकरण क्वार्टज़ाईट को गुटिकाओं पर बने कुट्टव्यक व कुट्टन्तिक प्रकार हैं। कुट्टव्यक की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है। बड़े व गहरे चिप्पड़ों के निशान वाले ये उपकरण पाषाण हथौड़ों के प्रयोग से बनाए प्रतीत होते हैं। कभी-कभी कुट्टन्तिक प्रकार में धार पर नोक बनाने का उपक्रम भी दिखाई देता है। इस प्रकार के उपकरण को हस्तकुठार का पूर्वज माना गया है। गुलेर नामक स्थान से प्राप्त यह वर्ग उल्लेखनीय है। इन उपकरणों की गढ़न प्रक्रिया में निकाले चिप्पड़ भी साथ में प्राप्त होते हैं जो कि आकार में उपकरणों पर बने चिप्पड़-निशानों से बहुत मिलते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हैं तथा इन चिप्पड़ों पर गुटिकाओं की प्राकृतिक सतह का भाग भी काफी मात्रा में सुरक्षित मिलता है, जिससे स्पष्ट हो जाता है कि यह उपकरण तराश प्रक्रिया में निकाले गए चिप्पड़ हैं। चपटी गुटिकाओं पर बनी छलनियाँ भी कई बार इन ढेरों में प्राप्त होती हैं। इनकी एक धार को छोटे-छोटे चिप्पड़ निकाल कर पैना बनाया जाता था। कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक वर्ग की तुलना में इनकी तराश अधिक सन्तुलित है। इन ढेरों से क्रोड़ एवं पाषाण गुटिकाओं के बिना गढ़े प्रकार भी प्राप्त होते हैं और कई बार यह निश्चित करना कठिन हो जाता है कि इनमें से कुछ अधूरे उपकरण हैं अथवा क्रोड़ हैं। परन्तु कभी-कभी विशेष रूप से गढ़े क्रोड़ों का प्रयोग स्पष्ट दिखाई देता है।

(ख) दूसरी परम्परा जिसमें कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक के साथ थोड़ा मात्रा में एशूलियन उपकरण भी गढ़े जाते थे कुछ ही केन्द्रों में प्राप्त हैं। ये स्थल एक दूसरे से अलग और एक दूसरे से बिना किसी सम्पर्क के स्थित प्रतीत होते हैं। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश के बरियारपुर, मध्य प्रदेश के महादेव-पिपरिया तथा आन्ध्र प्रदेश के वामनु स्थलों का आपस में कोई सम्बन्ध सम्भव नहीं लगता है, क्योंकि ये एक दूसरे से बहुत दूरी पर स्थित हैं एवं इनके मध्य के क्षेत्रों से इस वर्ग के और अवशेष भी नहीं प्राप्त होते हैं।

इन अवशेषों में कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक वर्ग लगभग चालीस प्रतिशत तक प्राप्त होता है जिसमें कुट्टन्तिक उपकरणों का प्रभुत्व है। साथ ही साधारण आकार की छोलनियाँ भी प्रचलित थीं। इन संग्रहों में हस्तकुठार एवं विदलक का अस्तित्व पाँच या छः प्रतिशत ही है तथा इन पर एशूलियन परम्परा के परिपक्व स्वरूप का प्रभाव कम है क्योंकि गढ़नोपरान्त प्राकृतिक सतह काफी छूटी है व तराश में भी बारीकी का अभाव है।

इस वर्ग के स्थलों से चिप्पड़ों की अधिकता मिलती है जिसमें तराशीय-चिप्पड़ों (dressing flakes) की प्रधानता है। कुछ बड़े चिप्पड़ पाषाण पटक विधि से भी प्राप्त किए जाते थे। इनके साथ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हो थोड़ी मात्रा में चिप्पड़ों को उपलब्धि में लवालुआ और छुरो-फल पद्धतियों के भी प्रचलन का अस्तित्व इन उपकरण संग्रहों में दिखाई पड़ता है।

तीनों उपरोक्त स्थलों की भौगोलिक स्थिति व उपकरणों का मात्रा एक दूसरे से भिन्न तो है पर सामान्य स्वरूप की तुलना के आधार पर महादेव-पिपरिया और वामनु एक दूसरे के अधिक समीप लगते हैं। बरियारपुर जो कि केन घाटी में स्थित है अलग-थलग दिखाई पड़ता है। इस भेद की व्याख्या करना कठिन है। अनुमानतः यह भौगोलिक दशाओं के भेद के कारण मानव की व्यावहारिक संव्यवस्था में भेद का परिणाम है।

(ग) तीसरा वर्ग जिसमें एशूलियन परम्परा में बने हस्तकुठारों की अधिकता है मद्रास संस्कृति के नाम से भी जाना जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप में इसका विस्तार सबसे अधिक है। दक्खिनी भारत की सभी नदियों की घाटियों में तो इस वर्ग के स्थलों की अधिकता है ही पर उत्तर भारत में भी इस वर्ग के इक्के-दुक्के स्थल प्राप्त होते हैं। सोहन घाटी में स्थित चौंतरा, अदियाल, चाकरी व गरिआला वे स्थल हैं जो सोहन क्षेत्र में स्थित होने पर भी इस परम्परा से अछूते थे तथा यहाँ एशूलियन उपकरणों का गढ़न हो रहा था।

भारत में इस संस्कृति के विशेष महत्वपूर्ण स्थल कुर्नूल, नालगोण्डा, नैलोर (आन्ध्र प्रदेश), मद्रास के पास कोर्टलयार घाटी (तामिलनाडु), नर्मदा घाटी और सोन (मध्य प्रदेश), बेलन व बेतवा, केन नदियों की घाटियाँ (उत्तर प्रदेश), गोदावरी-प्रवरा घाटी (महाराष्ट्र), गांभोरो, बैराईच, पुष्कर झील एवं आसपास का क्षेत्र (राजस्थान), पश्चिमी बंगाल में सिसुनिया पर्वतमाला तथा उड़ीसा में मयूरभंज आदि हैं।

इस वर्ग के उपकरण-संग्रहों में बारीक तराश वाले हस्तकुठारों को प्रचुर मात्रा के साथ कुछ विदलक भी प्राप्त होते हैं। चालीस से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पचास प्रतिशत एशूलियन परम्परा में बने ये उपकरण गढ़न, आकार तथा स्वरूप की दृष्टि से ध्यानाकर्षक हैं। यहाँ कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक उपकरणों का अस्तित्व तो प्राप्त होता है पर इनकी मात्रा बहुत थोड़ी है। साथ ही ये एशूलियन परम्परा में ही गढ़े गए हैं क्योंकि इन पर छोटे-छिछले चिप्पड़ों के निशान प्राप्त होते हैं। इस वर्ग में चिप्पड़ पर बनी छोलनियों की भी बड़ी संख्या मिलती है तथा कई बार इनको धारों पर खाँचों (notches) के भी निर्माण का आभास दिखलाई पड़ता है। तराश चिप्पड़ व क्रोड़ों को तैयार करके उनसे निकाले गए चिप्पड़ों की भी बड़ी संख्या है।

तकनीक व उपकरणों के आकार-प्रकार के आधार पर यह वग योरोप की उच्च एशूलियन साँस्कृतिक परम्परा के निकट है।

(घ) चौथा वर्ग एशूलियन परम्परा का ही है पर इसमें विदलक की संख्या बहुत अधिक मिलती है। इस वर्ग के तीन उल्लेखनीय स्थल हैं—नागार्जुन कोण्डा (आन्ध्र प्रदेश), ललितपुर (उत्तर प्रदेश) और चिरकी-नेवासा (महाराष्ट्र) जो एक दूसरे से काफी दूरी पर स्थित हैं। तीनों स्थलों में अलग तरह के पाषाणों का प्रयोग किया गया था। उदाहरणार्थ नागार्जुन कोण्डा की घाटी में बड़े क्वार्टज़ाईट, ललितपुर में ग्रेनाईट तथा चिरकी-नेवासा में डोलोराईट पाषाण खण्डों का प्रयोग उपकरण निर्माण के लिए किया गया था। इन पाषाण खण्डों से तैयार करके (जैसे ललितपुर व चिरकी-नेवासा में) या प्राकृतिक उभारों के प्रयोग से (नागार्जुन कोण्डा में) बड़े विदलक-आकारीय चिप्पड़ निकाल लिए जाते थे तथा इन चिप्पड़ों से बगल की थोड़ी तराश द्वारा अच्छे आकार के विदलक बनाना सम्भव था। विदलक के अतिरिक्त इस परंपरा के उपकरण ढेरों में हस्तकुठार भी पाए जाते हैं जो संख्या व आकार-प्रकार में विदलक की अपेक्षा गौण प्रतीत होते हैं। कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक की संख्या अत्यन्त अल्प या नहीं के बराबर ही है। कभी-कभी इनके साथ सपाट गुटिकाओं या बड़े मोटे चिप्पड़ों से छोलनियों के भी कुछ उदाहरण मिलते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चिप्पड़ व क्रोड़ों में विदलक का आकार प्राप्त करना मुख्य उद्देश्य प्रतीत होता है। छोटे तराश-चिप्पड़ एवं छोलनियों के लिए तोड़े गए चिप्पड़ भी मिलते हैं पर इनकी संख्या बहुत कम है।

विदलक प्रधानता वाले वर्ग का अस्तित्व मूल रूप से उपकरण माध्यम के स्वरूप से प्रभावित लगता है तथा यह एशूलियन परम्परा का एक उप-सांस्कृतिक वर्ग ही प्रतीत होता है।

उपरोक्त चारों उपकरण वर्ग का पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन इतिहास में क्या योगदान था यह निश्चित करना अभी तक के सीमित ज्ञान के आधार पर कठिन है। इस वर्ग में चार अलग प्रकार के जन-समूहों के आवास के अवशेष हैं या एक ही जन समुदाय ने अलग-अलग भौगोलिक दशाओं से तालमेल हेतु इन उपकरणों को गढ़ा था। ये दोनों ही सम्भावनाएं विद्वानों द्वारा अनुमानित हैं पर पूरी तरह निर्विवाद नहीं हैं।

उपकरणों के प्रकार, स्वरूप व प्रयुक्त पाषाण प्रकारों के आधार पर जो तथ्य सामने आते हैं उनमें पाषाण के स्वरूप व कुछ उपकरण वर्गों का गहरा सम्बन्ध स्पष्ट है। जैसे एशूलियन परम्परा के विस्तार क्षेत्र में विदलक प्रधान उपकरण वर्गों का अस्तित्व। इसी के साथ-साथ इन उपकरणों के स्वरूप के आधार पर अलग-अलग प्रयोगात्मक क्रियाओं की भी मात्रा निश्चित की जा सकती है। उदाहरण के लिए कुट्टव्यक व कुट्टन्तिक वर्ग द्वारा प्रहार एवं भौंडी काट का अनुमान, हस्तकुठार व छोलनियों द्वारा खुरचने व छीलने की प्रकिया और विदलक की अधिकता को वृक्ष व वनस्पति काटने के रूप में अगर स्वीकार किया जाए तो यह क्रियात्मक व्यवहार मानव के रहन-सहन के तरीके से अधिक प्रभावित लगते हैं। शिकार व प्राकृतिक रूप से उपलब्ध खाद्य सामग्री का संचय व भोग का स्वरूप तो पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन मानव का लगभग एक सा ही रहा होगा, पर खाद्य सामग्री उपलब्ध करने व आश्रय सम्बन्धी उपायों में शायद सूक्ष्म भेद रहा हो, जिस पर वातावरण एवं भौगोलिक दशाओं का प्रभाव भी सम्भावित लगता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4

मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियां

भारतीय उपमहाद्वीप में मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरणों के स्वतन्त्र अस्तित्व की खोज के पीछे एक रोचक घटना है। 1952 में प्रो० सांकलिया प्रवरा नदी के तट पर स्थित नेवासा नामक ताम्र-पाषाण कालीन स्थल की खुदाई करवा रहे थे। उनकी पत्नी एक दिन प्रातःकालीन भ्रमण के समय नदी के किनारे पड़े पत्थर के कुछ आकर्षक रंगीन टुकड़े कुतूहलवश बटोर लाईं। जब प्रो० सांकलिया ने उनको देखा तो उन्हें यह पहचानने में तनिक भी देर न लगी कि ये सुन्दर दिखने वाले रंगीन पत्थर के टुकड़े वास्तव में मानवकृत छोटे उपकरण हैं। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि यह उपकरण वर्ग उस समय तक के ज्ञात पुरा-प्रस्तर कालीन संग्रहों से भिन्न हैं। वे तुरन्त उस स्थल पर गए जहाँ से उनकी पत्नी ने उन टुकड़ों को बीना था। हाथी कूँआ नामक उस मोहल्ले के तट के निरीक्षण से वे जो प्रमाण प्रकाश में लाए उससे भारतीय पाषाण युग के वर्गीकरण को विशेष आधार मिला।

प्रवरा के तट पर हाथी कूँआ के पास नदी के तटीय कटावों में दो गुटिकीय जमाव स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ा। इन गुटिकीय जमावों के मध्य में एक जमी मिट्टी का स्तर भी बिछा था। ऊपरी व निचली गुटिकीय जमाव से पूर्व पुरा-प्रस्तर उपकरण प्राप्त किए गए थे, तथा ऊपरी गुटिकीय जमाव जो कि पाषाण के छोटे-छोटे टुकड़ों व बालू का जमाव था में दबे द्वितीय क्रम के उपकरण (Series II) थे, जिनको श्रीमती सांकलिया ने सुन्दर पाषाण टकड़े समझ कर बटोर लिया था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन तथ्यों के आधार पर प्रो० सांकलिया ने निष्कर्ष निकाला कि छोटे व रंगीन पत्थर पर बने उपकरण एशूलियन सांस्कृतिक परम्परा से परवर्ती हैं तथा उनकी इनसे भिन्नता व स्वतन्त्र अस्तित्व दिखाई देता है। प्राप्त स्तरीय क्रम के आधार पर ये द्वितीय क्रम के उपकरण माने जा सकते हैं और प्रथम प्राप्त स्थल के आधार पर इनको "नेवासा संस्कृति" की संज्ञा प्रदान की गयी। द्वितीय गुटिकीय जमाव से सम्बद्ध होने के कारण इस परम्परा को दक्खिन भारत के द्वितीय अति-वृष्टि जलवायु चक्र के समकालीन माना गया है।

नेवासा से प्राप्त प्रमाणों की घोषणा के पश्चात् विभिन्न नदियों को घाटियों से क्रमशः इस वर्ग के प्रमाण प्रकाश में आने लगे। लगभग दक्खिन भारत की सभी नदियों के तट, जहाँ से पूर्व पुरा-प्रस्तर काल के उपकरण प्राप्त किए गए थे, उनसे आज भी मध्य पुरा-प्रस्तर काल के अवशेष प्राप्त होते हैं। महाराष्ट्र की कई नदियों से केवल द्वितीय गुटिकीय जमाव व मध्य पुरा-प्रस्तर उपकरण ही प्राप्त होते हैं।

उत्तर व उत्तर-पश्चिम पर्वतीय तराई वाले क्षेत्रों में जिन उपकरणों को मध्य पुरा-प्रस्तर काल का माना गया है वे नदियों के तृतीय सोपान से सम्बन्धित किए गए हैं। सोपान संरचना इतिहास के आधार पर इनको हिमालय के तृतीय हिम युग तदनुसार उच्च प्रतिनूतन काल में रखा जाता है।

नदी की घाटियों में द्वितीय गुटिकीय जमावों से पाषाण उपकरणों के अतिरिक्त दो अन्य प्रकार के अवशेष—पशुओं की प्रस्तरीकृत हड्डियों तथा सीपी व घोंघों के समूह भी उपलब्ध हुए हैं। पशुओं की शारीरिक संरचना नोमैडिकस वर्ग की है जो कि वास्तव में मध्य प्रतिनूतन काल के पशु वर्ग माने गये हैं। परन्तु सीपी व घोंघों के समूह को रेडियो कार्बन तिथि निर्धारण (C^{14} dating method) के लिए प्रयुक्त किया गया है जिसके आधार पर इन जमावों को लगभग चालीस से बीस हजार ईसा पर्व का माना गया है। इन अवशेषों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्वारा तिथि निर्धारण को तो एक निश्चित आधार मिलता ही है साथ ही यह भी अनुमान करना सम्भव हो जाता है कि मध्य प्रतिनूतन काल के कुछ पशु वर्गों का स्वरूप दक्खिन भारत में उच्च प्रतिनूतन काल तक प्रचलित रहा।

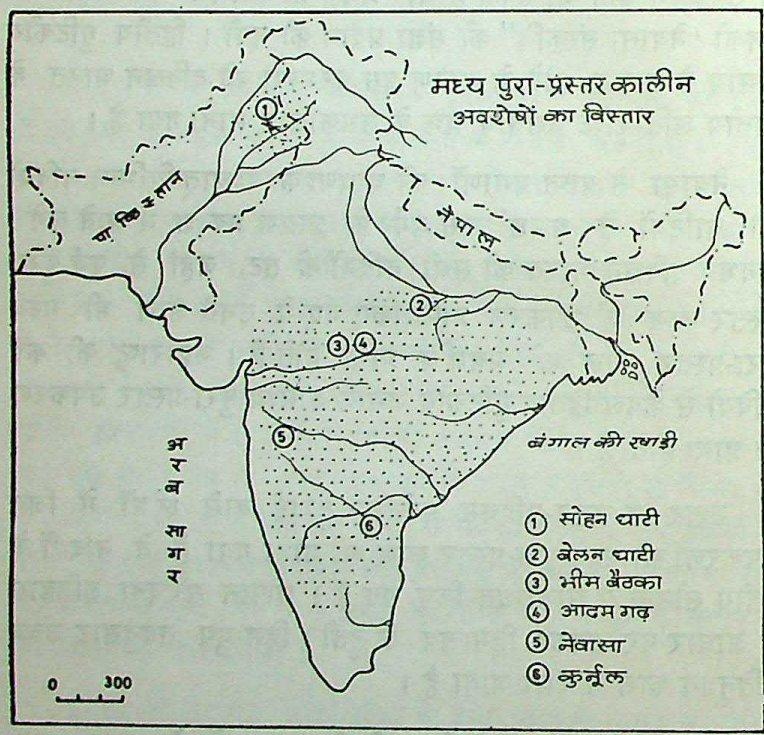

34. मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेषों का विस्तार

अब तक उपलब्ध मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेष भारत में निम्नलिखित प्रकार के स्थलों से प्राप्त किए गए हैं :

(क) गढ़न स्थल

(ख) शैलगृह

(ग) नदी की घाटियों में स्थित स्थल।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(क) मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन गढ़न स्थल पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन स्थलों की तुलना में अल्प हैं। केवल बेलन की घाटी के समीपवर्ती पर्वत ढलानों से ही इस वर्ग के केन्द्रों के अच्छे उदाहरण प्रकाश में आए हैं। यहाँ भी इनकी संख्या पूर्व पाषाण गढ़न स्थलों की तुलना में सीमित है तथा बेलन क्षेत्र में पूर्व पुरा-प्रस्तर उपकरण पहले वर्ग की तुलना में निचली ढलानों पर स्थित हैं। महत्वपूर्ण गढ़न स्थल बैठका से चिप्पड़ पर तराशे उपकरणों के साथ ही पाषाण हथौड़े, क्रोड़ व कई अन्य गढ़न प्रक्रिया में उपलब्ध चिप्पड़ भी प्राप्त हुए हैं। ये सब क्वार्ट-ज़ाईट के बारीक कणों वाली गुटिकाओं पर बने हैं जबकि निकटवर्ती पूर्व पुरा-प्रस्तर परम्परा के गढ़न स्थलों में क्वार्टज़ाईट के मोटे कणों वाले खण्डों का प्रयोग किया गया था।

(ख) शैलगृहों में भी मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन मानव के आवास के प्रमाण अधिक नहीं हैं और जहाँ भी इसके प्रमाण प्राप्त होते भी हैं वहाँ से साथ ही साथ पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन आवासीय साक्ष्य भी मिलते हैं। उदाहरणार्थ भीम-बैठका व आदमगढ़ से जो मध्य पुरा-प्रस्तर काल के अवशेष प्राप्त हुए हैं वहां वे एशूलियन परम्परा के जमावों के ठीक ऊपर के स्तरों से मिलते हैं। इन दोनों स्थलों में प्रयुक्त पाषाण प्रकार में भी भेद नहीं है। उपकरणों में भी एशूलियन परम्परा से मध्य पुरा-प्रस्तर परम्परा का विकास दोखता है। हस्त-कुठारों व विदलक की प्रचलित प्रथा के स्थान पर चिप्पड़ों से बनी बाँचेदार धारवाली छोलनियां अधिक लोकप्रिय हो गई थीं। साथ ही चिप्पड़ प्राप्त करने में भी परिष्कृत विधि लवालुआ के प्रयोग का बाहुल्य हो गया था।

(ग) नदी की घाटियों में स्थित स्थलों में भी भौगोलिक दशाओं के आधार पर दो वर्ग दिखते हैं जिनका उल्लेख पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेषों के सन्दर्भ में भी किया जा चुका है। उत्तर व उत्तर-पश्चिम के क्षेत्र में कुछ ही नदी की घाटियों से मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण प्राप्त हुए हैं। इनमें प्रमुख क्षेत्र सोहन नदी की घाटी है। यहां से प्राप्त प्रमाणों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि इस क्षेत्र में मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन परम्परा वास्तव में कुट्टव्यक व

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुट्टन्तिक उपकरण परम्परा का ही क्रमिक विकास है । जिसके कारण इनको परिपक्व या विकसित सोहन संस्कृति (Evolved or Final Soan Culture) को संज्ञा दी गई है । गुटिकाओं पर बने ये परवर्ती उपकरण आकार में छोटे व अधिक सफाई से तराशे गए कुट्टव्यक व कुट्टन्तिक वर्ग के हैं । साथ ही यहाँ लवालुआ पद्धति के प्रयोग द्वारा प्राप्त किए सामान्य चिप्पड़ व त्रिकोणीय चिप्पड़ों की भी अधिकता है । इस परम्परा में धार पर की बारीक तराश में दक्खिन भारत की तुलना में खाँचों का निर्माण कम किया गया है ।

दक्खिन भारत में स्थित मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेष द्वितीय गुटिकीय जमाव व उनके कटाव के कारण नदी की तलहटी में बिछे गुटिकीय ढेरों में दिखाई पड़ते हैं । लगभग सभी नदियाँ जिनके तट से पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेष पाये जाते हैं उनसे इस काल के उपकरण भी मिलते हैं । उत्तर प्रदेश में बेलन; मध्य प्रदेश में सोन, नर्मदा, बेतवा; राजपुताना में बैराईच व गाम्भीरो; महाराष्ट्र में भीमा, घोड़, गोदावरी व प्रवरा; आन्ध्र में कृष्णा, तुँगभद्रा; उड़ीसा में महानदी आदि इस संस्कृति के विशेष रूप से उल्लेखनीय क्षेत्र हैं ।

इस वर्ग में बेलन घाटी से उपलब्ध साक्ष्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, क्योंकि यहाँ द्वितीय गुटिकीय जमाव का मोटा स्तर प्राप्त हुआ है जिसमें तीन वर्ग के मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण प्राप्त किए गए हैं । उपकरण बनाने के लिए प्रयुक्त पाषाण प्रकारों में स्पष्ट चयन पद्धति दिखाई पड़ती है जैसे—निचले भाग में केवल क्वार्टज़ाईट का प्रयोग किया गया है जबकि मध्य के भाग में क्वार्टज़ाईट के साथ बारीक कणों वाले चर्ट वर्गीय पत्थरों का भी प्रयोग हुआ है । तृतीय भाग से केवल बारीक कणों वाले चर्ट के पाषाणों पर बने उपकरण ही मिले हैं ।

मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण क्वार्टज़ाईट, चर्ट, वर्ग जैसे—चर्ट जासपर आदि पाषाण खण्डों से निर्मित हैं । अधिकतर क्षेत्रों में जहाँ बारीक कणों वाले चर्ट वर्ग के पाषाण उपलब्ध थे वहां इस वर्ग को उपकरण गढ़न के लिए प्राथमिकता दी गई है । पर ऐसे क्षेत्र जैसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भीम-बैठका, सोहन घाटी व कृष्णा घाटियों में स्थित स्थल जहाँ वांछित पाषाण केवल क्वार्टज़ाईट ही था मजबूरी की दशा में क्वार्टज़ाईट का ही प्रयोग मिलता है, ऐसे जहां बारीक कणों वाले पाषाण खण्ड सीमित मात्रा में उपलब्ध थे उन स्थलों पर क्वार्टज़ाईट व बारीक कणों वाले चर्ट वर्ग के पाषाणों का साथ-साथ प्रयोग किया गया था । इनमें नर्मदा की घाटी में स्थित महादेव-पिपरिया व आदमगढ़, आन्ध्र प्रदेश स्थित अनगवाड़ी व कुर्नूल प्रदेश के स्थल विशेष महत्वपूर्ण हैं।

मध्य पुरा-प्रस्तर काल में जिन उपकरणों का गढ़न किया गया वे आकार में पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरणों से काफी छोटे हैं । बारीक कणों वाले पत्थर उपलब्ध होने पर भी छोटे आकार के टुकड़ों के कारण उनका पूर्व पुरा-प्रस्तर काल में उपकरण निर्माण के लिए प्रयोग नहीं किया जा सका। मध्य पुरा-प्रस्तर काल में इनकी उपयोगिता का कारण बारीक कणों की संरचना व उपकरणों का छोटा आकार था।

मध्य पुरा-प्रस्तर काल में निर्मित उपकरण मुख्य रूप से चिप्पड़ों पर बने हैं, इनमें विभिन्न प्रकार की छोलनियों की संख्या अनुपात में अधिक है। छोलनियों में कई आकार की धारें बनी मिलती हैं जैसे—सीधी, घुमावदार, खाँचेदार व आरीदार । कई बार अगर चपटे व पतले पाषाण टुकड़े प्राकृतिक रूप से किसी स्थल पर प्राप्त थे तो उनके किनारों को तराश कर पैना बना लिया जाता था और इनको चिप्पड़ों के स्थान पर प्रयुक्त किया जाता था। छोलनियों के अतिरिक्त कुछ मात्रा में नोकीले व छिद्रक उपकरण भी गढ़े गए थे। इस काल का एक अन्य उल्लेखनीय उपकरण प्रकार चिप्पड़ पर बने चाकू हैं।

योरोप की तुलना में भारतीय मध्य पुरा-प्रस्तर उपकरण वर्ग को तराश घटिया है। यूरोप की मध्य पुरा-प्रस्तर संस्कृतियों में मुस्टेरियन परम्परा में प्रयुक्त विशेष धार तराश पद्धति का भारत में अभाव है। छोलनियों व नोकीले उपकरणों के स्वरूप भी यहाँ उतने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुगढ़ नहीं हैं जो कि योरोप की विशुद्ध व किना-फैरासी मुस्टेरियन परम्पराओं से प्राप्त किए गये हैं।

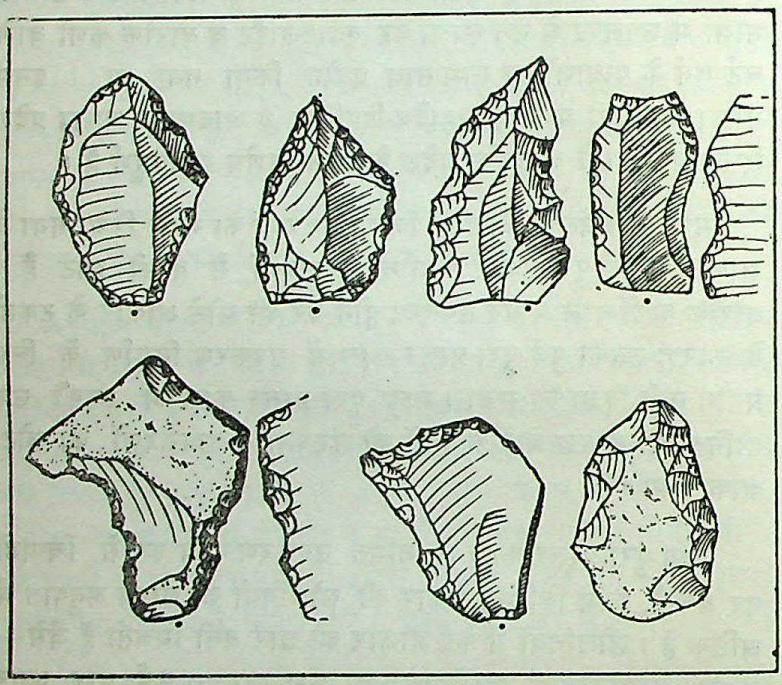

35. मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण

चिप्पड़ों की उपलब्धि का विशेष महत्व मध्य पुरा-प्रस्तर काल में था; क्योंकि वांछित उपकरण निर्माण के लिए ये आवश्यक थे। चिप्पड़ों की उपलब्धि के तरीकों पर प्रयुक्त पाषाण की संरचना एवं प्रकृति का विशेष प्रभाव दिखाई पड़ता है। उदाहरण के लिए जो बारीक कणों वाले पाषाण थे उनसे बिना विशेष पूर्व गढ़न के ही वांछित चिप्पड़ प्राप्त किए जा सकते थे। परन्तु मोटे कणों वाले पाषाण जो सामान्यतः टेढ़े-मेढ़े टुकड़ों के रूप में प्राप्त होते हैं, से अपेक्षित आकार व प्रकार के चिप्पड़ प्राप्त करने के लिए क्रोड़ों की विशेष पूर्व गढ़न की आवश्यकता होती थी। उदाहरणार्थ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्वार्टज़ाईट पाषाण पर बने उपकरणों में लवालुआ पद्धति का प्रयोग अधिक है जबकि बारीक कणों वाले चर्ट वर्ग के पत्थरों में इस पद्धति का प्रयोग सीमित है। ऐसे स्थल जहाँ दोनों वर्गों के पाषाणों का प्रयोग हुआ है वहाँ पर भी यही प्रवृत्ति स्पष्ट दिखाई देती है।

चिप्पड़ प्राप्त करने की प्रयुक्त पद्धतियों के तुलनात्मक अध्ययन में भी भारतीय उपमहाद्वीप व योरोपीय मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियों में भेद दिखाई पड़ते हैं। लवालुआ पद्धति से प्राप्त किए गए सामान्य चिप्पड़, नोकीले चिप्पड़ व मुस्टेरियन क्रोड़ योरोप की मध्य पुरा-प्रस्तर संस्कृतियों की विशषता हैं। परन्तु योरोप की यह सांस्कृतिक विशेषता नेवासा संस्कृति में गौण है।

उपरोक्त मुख्य विशेषताओं के आधार पर भारतीय मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेष योरोप के डेन्टीकुलेट मुस्टेरियन सांस्कृतिक परम्परा (Denticulate Mousterian) से समानता तो रखते हैं पर साथ हो ये स्थानीय गुणों से भी युक्त हैं।

नेवासा संस्कृति के ही समान डेंटीकुलेट मुस्टेरियन संस्कृति से भी नीयाण्डरथाल मानव की हड्डियाँ अभी तक नहीं मिली हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में पूर्व के ही समान मध्य पुरा-प्रस्तर काल में भी मानव कंकालों का अभाव है। यहाँ तक उल्लेख करना उचित होगा कि योरोप में भी नीयाण्डरथाल मानव के पार्थिव अवशेष सभी मध्य पुरा-प्रस्तर सांस्कृतिक वर्गों से नहीं प्राप्त होते हैं। दूसरी ओर भारतीय उपमहाद्वीप में जहाँ मध्य पुरा-प्रस्तर काल को संस्कृतियों में मानव कंकाल का अभाव है वहीं यूरोप के नीयाण्डरथाल मानवकृत विशुद्ध मुस्टेरियन (Typical Mousterian) और कीना-फैरासी मुस्टेरियन (Qina-Ferrassie Mousterian) सांस्कृतिक अवशेषों का भी अभाव दिखलाई पड़ता है।

एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि भारत की मध्य पुरा-प्रस्तर काल की संस्कृतियों का जो कालक्रम है वह योरोप की तुलना में काफी बाद का है। उदाहरणार्थ नीयाण्डरथाल मानव एवं मुस्टेरियन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुगढ़ नहीं हैं जो कि योरोप की विशुद्ध व किना-फैरासी मुस्टेरियन परम्पराओं से प्राप्त किए गये हैं।

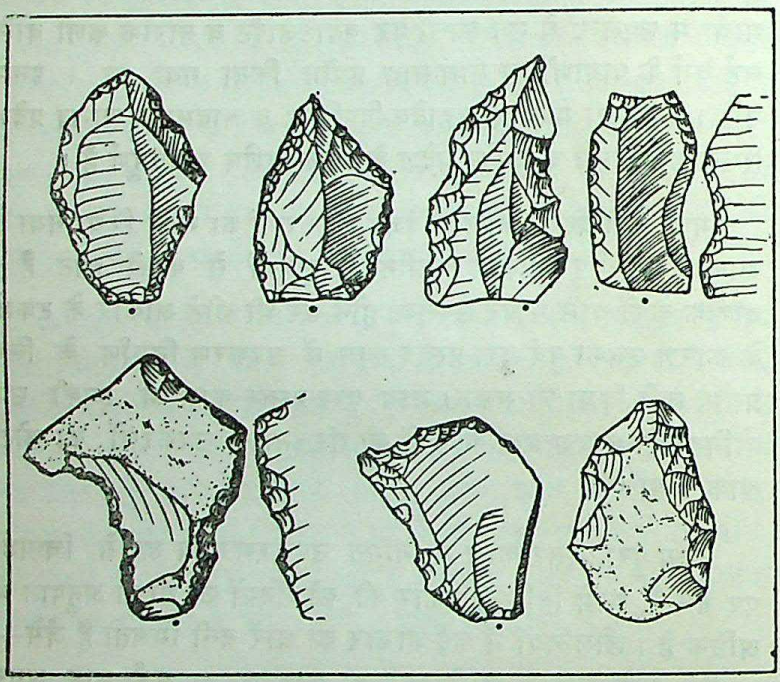

35. मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण

चिप्पड़ों की उपलब्धि का विशेष महत्व मध्य पुरा-प्रस्तर काल में था; क्योंकि वांछित उपकरण निर्माण के लिए ये आवश्यक थे। चिप्पड़ों की उपलब्धि के तरीकों पर प्रयुक्त पाषाण की संरचना एवं प्रकृति का विशेष प्रभाव दिखाई पड़ता है। उदाहरण के लिए जो बारीक कणों वाले पाषाण थे उनसे बिना विशेष पूर्व गढ़न के ही वांछित चिप्पड़ प्राप्त किए जा सकते थे। परन्तु मोटे कणों वाले पाषाण जो सामान्यतः टेढ़े-मेढ़े टुकड़ों के रूप में प्राप्त होते हैं, से अपेक्षित आकार व प्रकार के चिप्पड़ प्राप्त करने के लिए क्रोड़ों की विशेष पूर्व गढ़न की आवश्यकता होती थी। उदाहरणार्थ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्वार्टज़ाईट पाषाण पर बने उपकरणों में लवालुआ पद्धति का प्रयोग अधिक है जबकि बारीक कणों वाले चर्ट वर्ग के पत्थरों में इस पद्धति का प्रयोग सीमित है। ऐसे स्थल जहाँ दोनों वर्गों के पाषाणों का प्रयोग हुआ है वहाँ पर भी यही प्रवृत्ति स्पष्ट दिखाई देती है।

चिप्पड़ प्राप्त करने की प्रयुक्त पद्धतियों के तुलनात्मक अध्ययन में भी भारतीय उपमहाद्वीप व योरोपीय मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियों में भेद दिखाई पड़ते हैं। लवालुआ पद्धति से प्राप्त किए गए सामान्य चिप्पड़, नोकीले चिप्पड़ व मुस्टेरियन क्रोड़ योरोप की मध्य पुरा-प्रस्तर संस्कृतियों की विशषता हैं। परन्तु योरोप की यह सांस्कृतिक विशेषता नेवासा संस्कृति में गौण है।

उपरोक्त मुख्य विशेषताओं के आधार पर भारतीय मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेष योरोप के डेन्टीकुलेट मुस्टेरियन सांस्कृतिक परम्परा (Denticulate Mousterian) से समानता तो रखते हैं पर साथ हो ये स्थानीय गुणों से भी युक्त हैं।

नेवासा संस्कृति के ही समान डेंटीकुलेट मुस्टेरियन संस्कृति से भी नीयाण्डरथाल मानव की हड्डियाँ अभी तक नहीं मिली हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में पूर्व के ही समान मध्य पुरा-प्रस्तर काल में भी मानव कंकालों का अभाव है। यहाँ तक उल्लेख करना उचित होगा कि योरोप में भी नीयाण्डरथाल मानव के पार्थिव अवशेष सभी मध्य पुरा-प्रस्तर सांस्कृतिक वर्गों से नहीं प्राप्त होते हैं। दूसरी ओर भारतीय उपमहाद्वीप में जहाँ मध्य पुरा-प्रस्तर काल को संस्कृतियों में मानव कंकाल का अभाव है वहीं यूरोप के नीयाण्डरथाल मानवकृत विशुद्ध मुस्टेरियन (Typical Mousterian) और कीना-फैरासी मुस्टेरियन (Qina-Ferrassie Mousterian) सांस्कृतिक अवशेषों का भी अभाव दिखलाई पड़ता है।

एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि भारत की मध्य पुरा-प्रस्तर काल की संस्कृतियों का जो कालक्रम है वह योरोप की तुलना में काफी बाद का है। उदाहरणार्थ नीयाण्डरथाल मानव एवं मुस्टेरियन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संस्कृतियों के अन्तिम चरणों की तिथि योरोप में पैंतालिस से चालिस हजार ईसा पूर्व निश्चित की गई है जबकि भारत में मध्य पुरा-प्रस्तर युग का प्रारम्भ लगभग इस काल का है।

योरोप एवं भारत उपमहाद्वीप में एक ही संस्कृति के समय में इतने लम्बे काल भेद का कारण ठीक-ठीक ज्ञात नहीं है। कुछ विद्वानों की धारणा है कि यह भी सम्भव है कि जिन उदाहरणों को काल निर्धारण के लिए प्रयुक्त किया गया उनमें अशुद्धि रही हो। दूसरी सम्भावना यह है कि प्रस्तर युग में भारत का विश्व सांस्कृतिक विकास से अलगाव रहा हो और परिणामस्वरूप प्रस्तर युगीन मानव तकनीकी विकास क्रम में पिछड़ गया हो। परन्तु उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर इन दोनों ही सम्भावनाओं को प्रमाणित करना कठिन है।

योरोपीय मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन प्रमाणों से स्पष्ट है कि इस काल का मानव प्राकृतिक गुफाओं में रहने के अतिरिक्त आवास तथा आश्रय सम्बन्धी प्रयासों के रूप में जानवरों के चमड़ों के तम्बुओं का भी निर्माण कर रहा था। इस बात के भी संकेत मिले हैं कि इस काल के मानव का झुकाव जादू-टोने आदि की ओर भी आरम्भ हो गया था। परन्तु भारतीय उपमहाद्वीप से अभी तक इस प्रकार के किसी भी प्रमाण की अनुपस्थिति में यह सम्भावना मात्र प्राक्कल्पना ही रह जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5

उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियाँ

भारतीय उपमहाद्वीप में उच्च पुरा-प्रस्तर काल (Upper Palaeolithic) के अस्तित्व की पहचान लगभग एक दशक से कुछ ही पूर्व की गई है। प्रो० गोवर्धन राय शर्मा ने बेलन घाटी के सर्वेक्षण में जिन प्रमाणों को प्राप्त किया उनके आधार पर ही मानव संस्कृति के इस अध्याय के अस्तित्व की निर्विवाद रूप से स्थापना हुई। इसके पूर्व पुरातत्वविद् यह स्वीकार कर चुके थे कि भारतीय उपमहाद्वीप में उच्च पुरा-प्रस्तर युग का अस्तित्व था ही नहीं। अतः इस चरण के अभाव के कारण प्रारम्भिक पाषाण युग का विभाजन यहाँ योरोपीय ढाँचे से बदल कर अफ्रीकी ढाँचे में परिवर्तित कर दिया गया क्योंकि अफ्रीका में भी उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेषों का स्वरूप अस्पष्ट था। जिस विभाजन को 1961 में दिल्ली में हुई विद्वत् परिषद में अपनाया गया उसमें पुरा-प्रस्तर काल के प्रथम दो चरणों व मध्य प्रस्तर काल को क्रमशः प्रारम्भिक पाषाण युग (Early Stone Age), मध्य पाषाण युग (Middle Stone Age) और उत्तर पाषाण युग (Late Stone Age) में संयोजित किया गया था। इस व्यवस्था में उच्च पुरा-प्रस्तर युग की रिक्तता व्यक्त नहीं होती थी। लेकिन बाद में उच्च पुरा-प्रस्तर युग के अस्तित्व की स्थापना द्वारा योरोपीय ढाँचे के अनुसार पुरा-प्रस्तर काल की संस्कृतियों का विकास भारतीय उपमहाद्वीप में भी प्रमाणित हो गया, जिसके कारण कालान्तर में पुनः पुरा-प्रस्तर युग के तीनों चरणों तथा मध्य प्रस्तर युग के ताल-मेल की आवश्यकता हुई। अतः अब योरोपीय पाषाण युग के विभाजन को स्वीकार कर लिया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मिर्जापुर व इलाहाबाद जिलों में स्थित बेलन नदी की घाटी से प्रो० गोवर्धन राय शर्मा एवं उनके दल के अन्य सदस्यों ने तृतीय गुटिकीय जमाव (Gravel III) का स्तर खोज निकाला जिसमें छुरी-फल पर बने उपकरण दबे पाए गए। द्वितीय गुटिकीय और तृतीय गुटिकीय जमाव के मध्य मिट्टी का एक जमाव मिला। तृतीय गुटिकीय जमाव

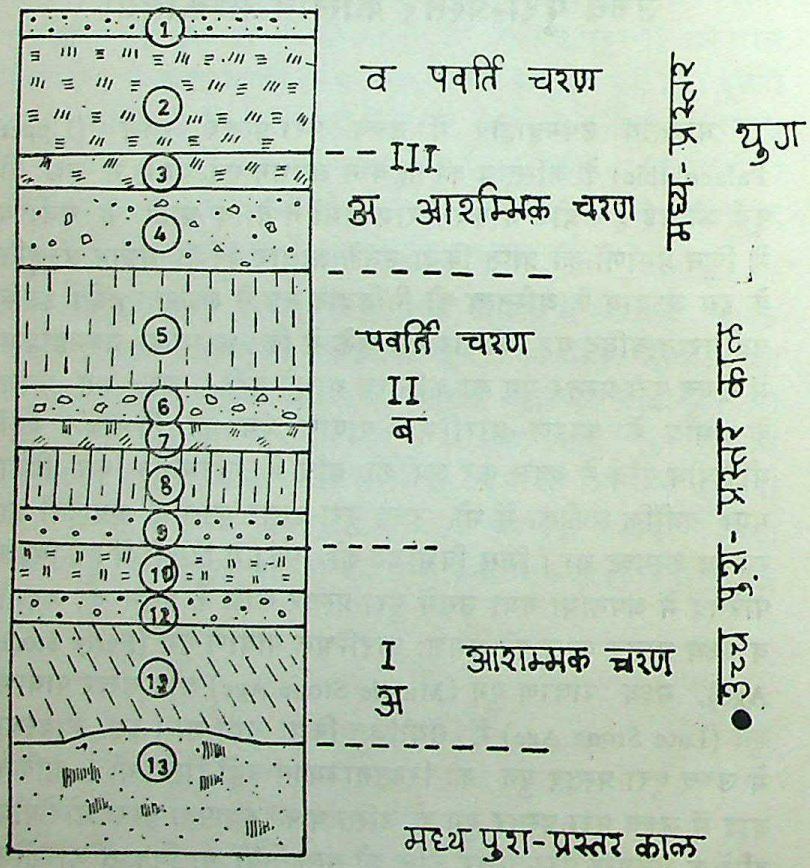

36. उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन नद-जमाव व समकालीन सांस्कृतिक अवशेष

कंकड़ व छोटे-छोटे पाषाण के टुकड़ों द्वारा निर्मित है। यह स्तर पतली तह के रूप में केवल कुछ ही स्थानों पर सुरक्षित रह पाया है। इसमें स्थित होने के कारण छुरी-फल पर बने उपकरण वर्गों को एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निश्चित भू-भौतिकीय आधार पर क्रम प्रदान करना सम्भव हुआ। तृतीय गुटिकीय जमाव जिनसे उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेष मिले उनके पहले के गुटिकीय जमाव (द्वितीय) से मध्य पुरा प्रस्तर, ऊपर बिछे मिट्टी के स्तर से मध्य प्रस्तर परम्परा के उपकरण प्राप्त हुए। अतः इस प्रकरण द्वारा उच्च पुरा-प्रस्तर परम्परा के उपकरणों को मध्य पुरा-प्रस्तर युग व मध्य प्रस्तर युग के मध्य में रखना सम्भव हुआ।

बेलन घाटी की नई खोजों के आधार पर पूर्व के प्रमाण जो कि अलग-अलग क्षेत्रों से प्राप्त किए गए थे पर अपूर्ण जानकारी के अभाव

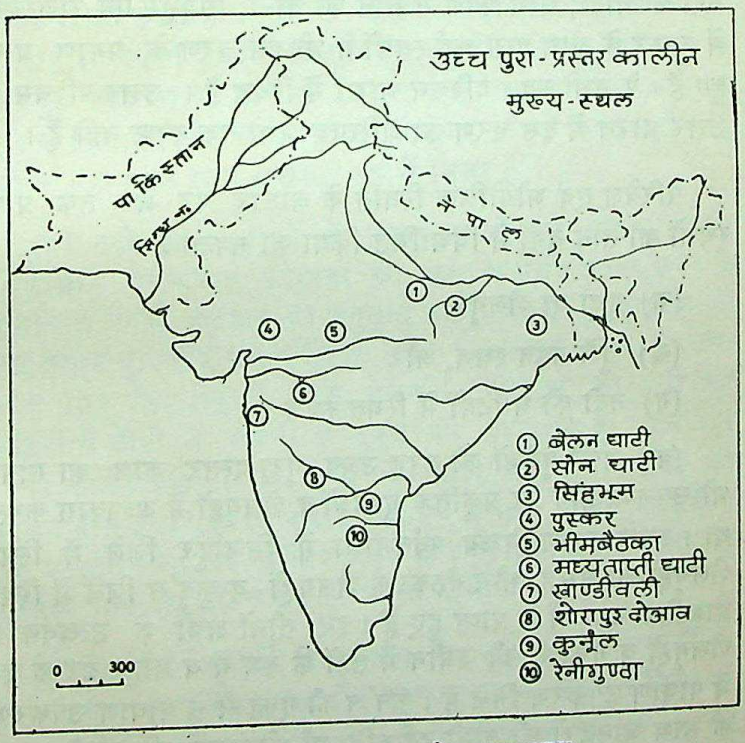

37. उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन मुख्य-स्थल

में उनका मूल स्वरूप निश्चित नहीं किया जा सका था उनके वर्गीकरण को भी आधार प्राप्त हुआ। उदाहरण के लिए बम्बई के पास

CC-0. Agamnigam Digital Foundation, Chandigarh

खाण्डिवली और कुर्नूल से प्राप्त तृतीय क्रम (Series III) के उपकरण, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश तथा महाराष्ट्र से प्राप्त अन्य छुट-पुट खोजों को आज हम निश्चित रूप से उच्च पुरा-प्रस्तरीय सांस्कृतिक अवशेष मान सकते हैं।

उच्च पुरा प्रस्तर काल की संस्कृति के अवशेष अब तक सीमित क्षेत्रों से ही प्राप्त हुए हैं। बेलन घाटी के अतिरिक्त दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र आन्ध्र प्रदेश है जहाँ चित्तूर, कुर्नूल जिलों तथा शोरापुर दोआब से उल्लेखनीय प्रमाण मिले हैं। इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र में ताप्ती नदी की घाटी; मध्य प्रदेश में सोन की घाटी; सिहभूम एवं राजस्थान में पुस्कर के आस-पास कई स्थलों से भी इस चरण के प्रमाण प्राप्त हुए हैं। ये सभी स्थल दक्खिन भारत में स्थित हैं। उत्तर-पश्चिम व उत्तर भारत में इस चरण का अस्तित्व अभी तक स्पष्ट नहीं है।

परिवेश एवं भौगोलिक स्थिति के आधार पर अब तक प्राप्त स्थलों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

(क) गुहा या शैलगृह,

(ख) खुले गढ़न स्थल, और

(ग) नदी की घाटियों में स्थित स्थल।

(क) अपने पूर्वजों की तरह उच्च पुरा-प्रस्तर काल का मानव भी उपलब्ध होने पर प्रकृतिक गुफाओं व शैलगृहों में अल्पवास करता था। इसके प्रमाण विन्ध्य पर्वतमाला में मिर्जापुर जिले में स्थित शैलगृहों का समूह, भीम-बैठका के शैलगृहों व कुर्नूल जिले में स्थित प्राकृतिक गुफाओं से प्राप्त हुए हैं। इन तीनों क्षत्रों के उत्खनन से शैलगृहों व गुफाओं की जमीन में तहों के रूप में व बाहर ढेर के रूप में पाषाण उपकरण मिले हैं। कुर्नूल की गुफाओं से पाषाण उपकरणों के साथ जानवरों की तोड़ी हुई हड्डियाँ भी प्राप्त की गई हैं। पर इन स्थलों से आवासीय या आश्रय की सुविधा के लिए मानव कृत किसी विशेष आयोजन के प्रमाण नहीं प्राप्त हुए हैं। अतः प्राकृतिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रूप से उपलब्ध खाद्य सामग्री व खानाबदोश जीवन-निर्वाह पद्धति ही उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन मानव के रहन-सहन का ढंग था।

(ख) उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन मानव द्वारा उपकरणों के गढ़न स्थल बहुत सीमित संख्या में प्राप्त हुए हैं। इस वर्ग के महत्वपूर्ण प्रमाण बेलन घाटी के समीपवर्ती पहाड़ी ढलानों तथा सोन की घाटी में स्थित हैं। बारीक कणों वाले पाषाण खण्डों को तोड़-तोड कर जिन उपकरणों का गढ़न किया गया उनके साथ तराश, चिप्पड़, पत्थर के टूटे टुकड़े व सम्बन्धित औज़ार तथा पाषाण खण्डों की भरमार इन स्थलों में फैली मिलती हैं। अपूर्ण या गढ़न प्रक्रिया में भग्न हुए उपकरण भी साथ ही प्राप्त होते हैं। मध्य प्रदेश में सोन नदी के किनारे स्थित बगोर स्थल विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि यहां गढ़न स्थल सुरक्षित रूप में मिला है।

(ग) नदी की घाटियों में स्थित स्थलों का विशेष महत्व समकालीन सांस्कृतिक परम्परा को क्रम व तिथि प्रदान करने के अतिरिक्त उनकी जलवायु का अनुमान करना भी है। उदाहरण के लिए तृतीय गुटिकीय जमाव जिनसे उच्च पुरा-प्रस्तर काल के उपकरण प्राप्त किए गए हैं उनसे बेलन व महाराष्ट्र की नदी की घाटियों से सीपी व लकड़ी के टुकड़े भी प्राप्त हुए हैं। इन पर प्रयुक्त कार्बन चौदह तिथि विधि के आधार पर इन जमावों को लगभग बीस हजार से दस हजार ईसा पूर्व के मध्य रखा गया है। अतः प्रतिनूतन काल के अन्तिम चरण में उच्च पुरा-प्रस्तर काल का अस्तित्व अन्य क्षेत्रों के समान ही भारत में था।

भू-भौतिकीय जमावों के परीक्षण के आधार पर तथाकथित सांस्कृतिक परम्परा की समकालीन जलवायु का भी अनुमान किया जा सकता है। जैसे प्रतिनूतन काल के अन्तिम चरणों में दक्खिन भारत का अधिकतर भाग निर्जलीय जलवायु वाला क्षेत्र दिखने लगा। इस समय अल्पजीवी जलवायु चक्र के रूप में कुछ नमी का काल आया जिसके फलस्वरूप तृतीय गुटिकीय जमावों की संरचना हुई। इस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काल में ही उच्च पुरा-प्रस्तर युगीन मानव झील या नदियों के किनारे वास कर रहा था ।

उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण सामान्यतः चर्ट वर्ग के बारीक पाषाणों पर गढ़े गए हैं । परन्तु एक दो क्षेत्रों में जैसे आन्ध्र प्रदेश के चित्तर जिले में रेनीगुण्ठा के समीपवर्ती स्थलों से प्राप्त उपकरण क्वार्टज़ाईट पर ही बने मिलते हैं । बाकी सब क्षेत्रों से प्राप्त उपकरण वर्ग चर्ट, जासपर, एगेट, चालीस-डोनी, क्वार्टज व बहुत सीमित अनुपात में क्वार्टज़ाईट पर भी बने हैं ।

आकार में उच्च पुरा प्रस्तर काल के उपकरण मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरणों से तो छोटे हैं परन्तु ये मध्य प्रस्तर युग के लघु उपकरणों (Microliths) से बड़े हैं अर्थात् इनका आकार दोनों के बीच का है ।

उच्च पुरा-प्रस्तर काल के उपकरण परम्परा का विकास पहले की प्रचलित परम्परा से ही हुआ है । बेलन घाटी के प्रमाणों से स्पष्ट है कि उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण वास्तव में मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन सांस्कृतिक परम्परा के ही क्रमिक परिमार्जित स्वरूप हैं । दूसरी तरफ इसके भी संकेत प्राप्त होते हैं कि यह उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन परम्परा ही मध्य प्रस्तर युगीय परम्परा (Mesolithic tradition) की जन्मदात्री है । बाद के चरणों के इतिहास के प्रमाण भी बेलन व ताप्ती नदियों की घाटियों से प्राप्त होते हैं । छुरी-फल परम्परा के साथ क्रमशः लघु छुरी-फल या ब्लेड लेट (Bladelet) का प्रचलन प्रारम्भ हो जाता है जो कि परवर्ती लघु उपकरणों के लिए आधार प्रदान करते हैं ।

उच्च पुरा-प्रस्तर काल में छुरी-फल परम्परा का बाहुल्य दिखाई देता है । बारीक कणों वाले पाषाण के आयताकार या तिकोने खण्डों या गुटिकाओं को शीर्ष भाग एवं किनारे पर ऐसा गढ़ा जाता था कि नोकीले शृंग या पाषाण के हत्थे से दबाव डाल कर या उस पर प्रहार द्वारा थोड़े ही समय में क्रोड़ों से क्रम से कई छुरी-फल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

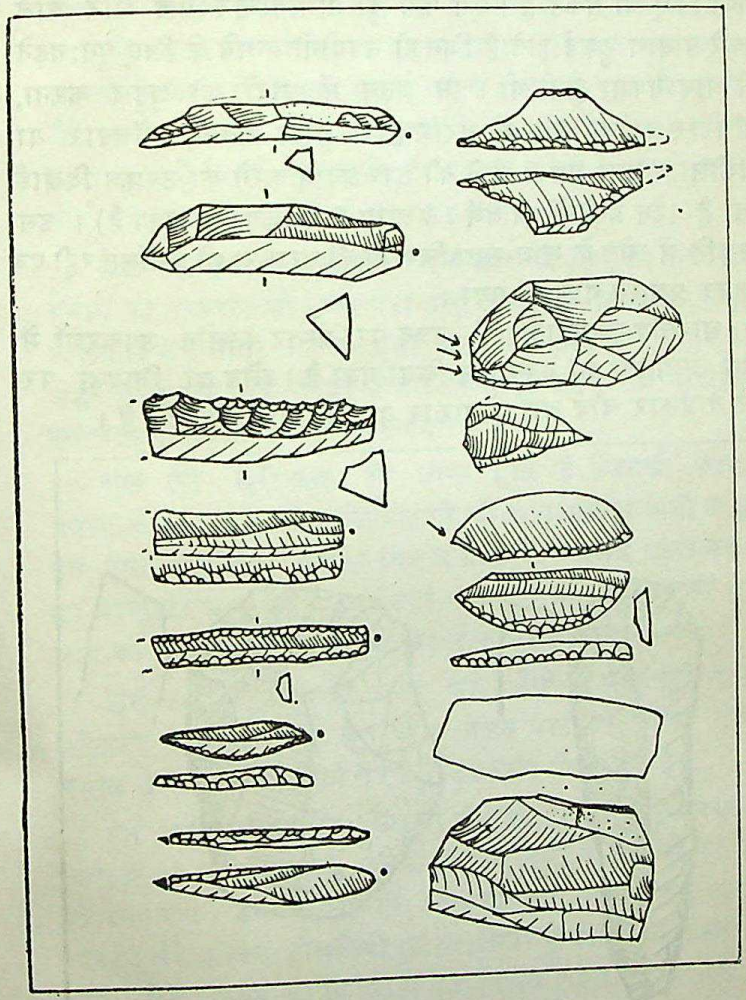

38. उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्राप्त किए जा सकते हैं। ऐसे फल दो समानान्तर तेज धार वाले संकरे पाषाण टुकड़े होने हैं जिनको उपयोगी बनाने के लिए पुनः गढ़ने को आवश्यकता होती थी। इस गढ़न में धारों को खट्टल करना, खाँचेदार बनाना, शीर्ष को तराश द्वारा मोटा गढ़ना, चोंचदार या नोकीला बनाना अथवा छेनी की धार प्रदान करने का उपक्रम दिखाई देता है (इन प्रकारों का वर्णन अध्याय 2 में किया जा चुका है)। इस संस्कृति में ब्लेड के साथ-साथ चिप्पड़ों की परम्परा भी प्रचलित रही पर उनका प्रचलन गौण हो गया।

भारतीय उपमहाद्वीप के उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरणों में शीर्ष छोलनियों का गढ़न कम किया गया है। ब्लेड या चिप्पड़ों पर बने ये प्रकार चौड़े अर्द्ध गोलाकार या चोंचदार धार वाले हैं।

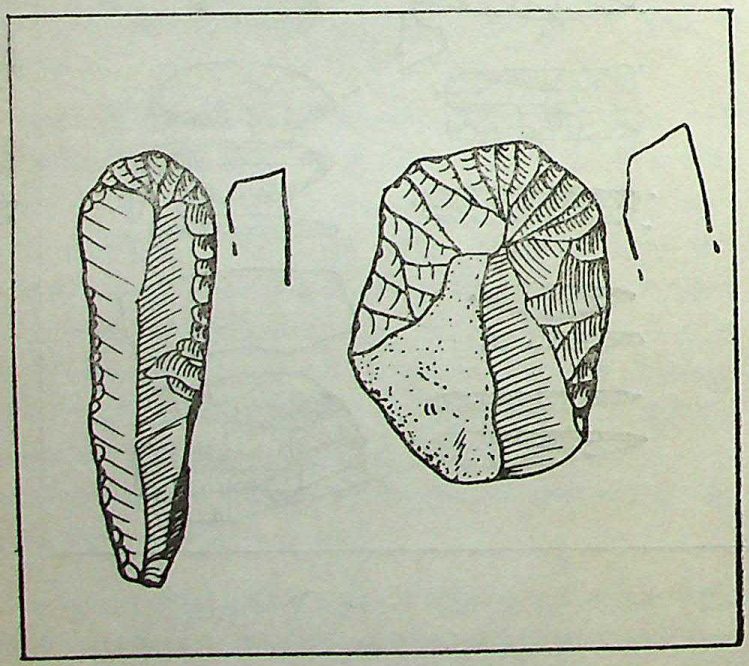

39. शीर्ष-छोलनियाँ

तक्षणियाँ भी भारत में सीमित संख्या में प्राप्त होती हैं तथा इनके प्रकार भी उतने विविध नहीं हैं जितने योरोपीय महाद्वीप के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियों से प्राप्त हैं। अधिकतर चिप्पड़ों या छुरी-फल के किनारे आड़े प्रहार द्वारा तोड़ कर उन पर छोटी नहरनी के आकार की धार बनाई गई है। केवल कुछ ही क्षेत्रों में, जैसे आन्ध्र प्रदेश में रेनीगुण्ठा स्थल से तक्षणियों की बड़ी संख्या प्राप्त होती है जिनमें कुछ विशिष्ट प्रकार की हैं। इनमें धंसी या अर्द्ध वृत्ताकार धार शीर्ष के भाग पर बनाई गई है।

छुरी-फल पर बने चाकुओं में एक धार को तराश कर खुट्ठल बनाने की परम्परा भी उच्च पुरा-प्रस्तर काल के उपकरण समूह की विशेषता है। सीधी धार या घूमी धार वाले मुट्ठेदार चाकुओं में अर्द्ध चन्द्राकार चाकू संख्या में सीमित तो हैं पर वे ध्यानाकर्षक हैं। इन चाकुओं की सामने की धार होती है।

कुछ ऐसे छुरी-फल भी प्राप्त होते हैं जिनकी धारों को प्रयोग के बाद कुछ परिमार्जित करने की आवश्यकता पड़ी व उनको पुनः पैना किया गया अथवा विशेष प्रयोगों के लिए धारों पर खाँचे या आरीदार धार का गढ़न किया गया है। कुछ छुरी-फलों के शीर्ष भाग को दोनों धारों पर तराश कर नोकीला भी बनाया गया है।

छुरी-फल के साथ ही साथ कुछ क्षेत्रों में लघु छुरी-फल का अस्तित्व भी प्राप्त होता है। जैसे बेलन घाटी के तृतीय गुटिकीय जमाव से लघु ब्लेड व उन पर बने उपकरण प्राप्त हुए हैं।

इन नवीन सांस्कृतिक लक्षणों के साथ ही साथ पूर्व परम्परा में चिप्पड़ों पर बनी विभिन्न प्रकार की छोलनियों व छिद्रकों का प्रचलन भी बना रहा। इनके साथ ही चिप्पड़ों का प्रयोग नए उपकरण आकार जैसे शीर्षक छोलनियों या तक्षणियों के लिए भी किया जाने लगा। ऐसे चिप्पड़ जो कि क्रोड़ों की विशेष गढ़न प्रक्रिया में प्राप्त किए गए थे उनको भी प्रयुक्त किया गया है। इस प्रवृत्ति से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस काल का मानव पाषाण के साधारण टुकड़ों को भी बेकार नहीं जाने देना चाहता था तथा पाषाण का पूर्ण उपयोग करने लगा था। इस संस्कृति का मानव अब अल्प श्रम द्वारा अधिक उपयोगी उपकरण बनाने लग गया था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रोड़ों में भी पूर्ण उपयोगिता की प्रवृत्ति दिखाई देती है, चिप्पड़, छुरी-फल अथवा उपकरण उपलब्ध करने वाले क्रोड़ सभी को तब तक प्रयोग में लाया जाता था जब तक कि उनसे चिप्पड़ या छुरी-फल प्राप्त किए जा सकते थे। बहुत छोटे व पतले हो जाने पर उनकी धारों या किनारों को तराश कर उपकरणों के रूप में बदल दिया जाता था।

पाषाण की पूर्ण उपयोग की प्रवृत्ति के पीछे व्यवहारिकता के अतिरिक्त उपर्युक्त माध्यम की सीमित मात्रा में उपलब्धता भी हो सकती है। सामान्यतः जो पाषाण के टुकड़े उच्च पुरा-प्रस्तर युग के उपकरणों को गढ़ने के लिए प्रयुक्त किए गए हैं वे छोटे-छोटे गुटिकीय आकार में कुछ ही स्थानों में केन्द्रित दिखाई पड़ते हैं। उपलब्ध गुटिकाओं में से सभी उपकरण बनाने के लिए उपयुक्त नहीं रहे होंगे। कुछ संरचनात्मक त्रुटियों से भी युक्त होंगे तथा तोड़े जाने के बाद ही यह पता चला पाता होगा कि उन पर सफलतापूर्वक उपकरण गढ़ा जा सकता था या नहीं।

योरोपीय महाद्वीप जहाँ कि उच्च पुरा-प्रस्तर काल के साँस्कृतिक विकास का सम्पूर्ण क्रम सुरक्षित है, की तुलना में भारत के अवशेष अधूरे लगते हैं। योरोप में यह सांस्कृतिक काल भारत की तुलना में लगभग पन्द्रह हजार वर्ष अधिक जीवित रहा क्योंकि वहां इन अवशेषों का काल लभभग पैंतीस हजार से दस हजार ईसा पूर्व के मध्य व्यवस्थित है। जबकि भारतीय उपमहाद्वीप में इस सांस्कृतिक परम्परा का प्रारम्भ लगभग बीस हजार ईसा पूर्व में हुआ।

योरोप में मानव के अस्थि अवशेषों के आधार पर आधुनिक मानव के प्रतिरूपीय उच्च पुरा-प्रस्तर संस्कृतियों के निर्माताओं में कई प्रजातीय गुणों के संकेत दृष्टिगोचर होते हैं। जबकि भारत में अस्थि अवशेषों के अभाव में इस आदि मानव का स्वरूप तक ज्ञात नहीं है।

साँस्कृतिक परम्पराओं में भी भारत के प्रमाण अपर्याप्त एवं अविकसित हैं। पाषाण पर बने उपकरणों में भी विशिष्ट प्रकारों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जैसे शीर्ष छोलनियों, तक्षणियों तथा चाकुओं की मात्रा तो सीमित है ही उस के साथ ही साथ उनके आकार व प्रकार में विविधता का भी अभाव है।

योरोप में हड्डो व श्रृंगों पर बने उपकरणों का बाहुल्य है। इसमें विशेष आकार के मछली मारने के भाले (harpoon) उल्लेखनीय हैं। हड्डो व श्रृंगों का प्रयोग भी भारतीय सन्दर्भ में उच्च पुरा-प्रस्तर काल के उपकरण में नहीं दिखाई पड़ता है। कुर्नूल जिले की प्राकृतिक गुफाओं से टूटी हुई हड्डी के टुकड़ों में छोटी आरी की तरह धार या नोकें बनी हैं। पर किसी अन्य चिह्न के अभाव में इनको निर्विवाद रूप से उपकरण नहीं माना जा सकता है। सम्भवतः जानवरों द्वारा चबा कर तोड़े जाने के कारण हड्डियों के इन टुकड़ों पर ये धार तथा नोकें बन गई हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पाषाण उपकरणों में भी वह वर्ग जिनका प्रयोग हड्डी व श्रृंगों को खोदने या खुचरने के लिए सम्भावित है जैसे तक्षणियाँ, शीर्ष छोलनियां आदि, उनकी भी संख्या भारतीय उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन अवशेषों में बहुत कम हैं।

योरोप का उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन मानव, होमो सापियन, कलाकार था। इसके द्वारा बनाए कई गुफा चित्र व हड्डी व हाथी दाँत की मूर्तियों के अतिरिक्त कुरेद कर बनी आकृतियां या उपकरण के हत्थों पर आलेखन प्राप्त होते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में बेलन घाटी से प्राप्त एक छोटी तथाकथित मातृदेवी प्रतिमा मिली है पर उनका महत्व भी सन्दिग्ध है। कुछ विद्वान् इस एकमात्र तथाकथित मूर्ति को मछली मारने के भाले का एक टूटा खण्ड मानते हैं। इसी प्रकार भीम-बैठका के शैलगृहों की दिवारों पर हरे रंग से चित्रित जानवर आकृतियों को उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन मानव की कृति मानने में भी विद्वान अन्य प्रमाणों के अभाव में हिचकिचाते हैं।

उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय उपमहाद्वीप का उच्च परा-प्रस्तर कालीन सांस्कृतिक ढांचे का स्वरूप अभी पर्ण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रूप से ज्ञात नहीं है। इसका मुख्य कारण, भारत में इस संस्कृति के अस्तित्व की सिद्धता एवं इस पर अत्यन्त अल्प शोध की अवधि है। आगे की खोजों से अन्य महत्वपूर्ण प्रमाण मिलने की पूरी आशा की जाती है। परन्तु जो सीमित प्रमाण उपलब्ध हैं इससे यह स्पष्ट है कि भारतीय उच्च पुरा-प्रस्तर परम्परा स्वदेशी है एवं योरोप के सांस्कतिक स्वरूप से अलग प्रकार की है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपसंहार

भारतीय उपमहाद्वीप में पुरा-प्रस्तर युग के इतिहास को रूप-रेखा जिसका वर्णन पहले के अध्यायों में किया गया है, स्पष्ट रूप से दो पक्षीय विशेषताओं से युक्त है। एक ओर तो इस युग की संस्कृतियों का विकास विश्व के पुरा-प्रस्तर युग की सामान्य धारा के अनुरूप दिखाई पड़ता है, दूसरी ओर प्रत्येक उपकाल में कुछ ऐसे सांस्कृतिक लक्षण दिखाई देते हैं जो हर क्षेत्र में अलग-अलग हैं अर्थात् किसी अन्य क्षेत्र के प्रतिरूप न होकर स्थानीय विशेषताओं के रूप में ही प्रकट होते हैं।

पुरा-प्रस्तर युग में गढ़न पद्धतियों के अन्वेषण व प्रचलन में जो विश्वव्यापी एकरूपता दिखाई पड़ती है उसका सम्बन्ध मानव की क्रमशः विकसित होती हुई शारीरिक क्षमता से जोड़ा जा सकता है। उदाहरणार्थ, अविकसित अंगुलियों व शारीरिक असंतुलन की दशा में पाषाण तोड़ने की साधारण विधियाँ जैसे पटककर तोड़ना, पाषाण को प्रहार द्वारा तोड़ना ही उस अर्धविकसित मानव के लिए संभव हो सकता था। अंगूठे की सुदृढ़ बनावट के बाद ही नियंत्रित तराश विधियों के प्रयोग के प्रारम्भ की संभावना है। भारतीय उपमहाद्वीप में मानव अस्थि के अभाव में इन पक्षों के विश्लेषण का आधार मुख्यरूप से उपकरणों की गढ़न पद्धतियों का अध्ययन तथा उनका योरोपीय एवं अफ्रीकी पुरा-प्रस्तर युगीन उपकरणों से तुलनात्मक अध्ययन है, क्योंकि इन दोनों महाद्वीपों से उपकरण के साथ-साथ मानव अस्थियाँ भी प्राप्त हुई हैं। भारत से उपकरणों की गढ़न पद्धतियों का ठीक वैसा ही क्रम प्राप्त होता है जैसा की अफ्रीका या योरोपीय द्वीपों से प्राप्त किया गया है। उदाहरण के लिए प्रारम्भ के पटक कर तोड़ने की विधि से लेकर नियंत्रित चिप्पड़ व छूरो-फल प्राप्त करने की विधियों तक के सब चरण भारतीय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपमहाद्वीप में भी प्राप्त होते हैं—जिनके आधार पर पुरा-प्रस्तर युग के मानव की तकनीकी उपलब्धि के इतिहास का सम्पूर्ण क्रमबद्ध स्वरूप प्राप्त होता है।

उपकरणों के स्वरूप व प्रचलन संख्या की दृष्टि से भारतीय पुरा-प्रस्तर युग के अवशेषों में स्वदेशीय गुण हैं। जैसे पूर्व पुरा-प्रस्तर काल में भी स्पष्ट रूप से चार प्रकार के उपकरण वर्गों का अस्तित्व प्राप्त होता है जो विशुद्ध कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक उपकरण, हस्तकुठार की अधिकता, विदलक की अधिकता और कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक व एशूलियन उपकरण के वर्ग हैं। ये सभी एक-दूसरे के समकालीन प्रतीत होते हैं। इनका स्वरूप न तो पूर्णरूपेण अफ्रीकी दिखता है और न ही योरोपीय। उत्तर व उत्तर-पश्चिम भारत के क्षेत्र में स्थित कुट्टव्यक-कुट्टन्तिक उपकरण वर्ग संभवतः दक्षिण-पूर्वी एशिया की ऐसी ही परम्परा से प्रभावित तो हो सकते हैं पर उनकी पूर्ण नकल नहीं हैं। इसी प्रकार अन्य तीन वर्गों में भी अफ्रीकी व योरोपीय पूर्व पुरा-प्रस्तर संस्कृतियों की झलक दिखाई पड़ सकती है परन्तु भारतीय अवशेष उनका अनुकरण मात्र हों ऐसा नहीं लगता। इसी प्रकार मध्य पुरा-प्रस्तर युग के सांस्कृतिक अवशेषों में भी कुछ सामान्य लक्षण योरोप के दांतीकुलेट मुस्टेरियन परम्परा के दिखाई पड़ते हैं—पर इनका भी स्वदेशी स्वरूप विशेष उपकरण प्रकारों एवं उपकरणों की गढ़न पद्धतियों के रूप में दिखाई देता है। भारतीय उच्च पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृतियाँ जो कि मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृति से विकसित हुई प्रतीत होतीं हैं उसका स्वरूप भी पश्चिम के महाद्वीपों की परम्परा से भिन्न है।

मध्य व उच्च पुरा-प्रस्तर उपकरण वर्गों में भारत से प्राप्त अवशेषों में नोकीले व विशेष रूप से छोटी धार वाले उपकरण जैसे छिद्रक, तिकोने नोकीले उपकरण, तक्षणियाँ एवं चाकू आदि की मात्रा सीमित है। इन वर्गों के प्रचलन के अभाव के पीछे गढ़न अक्षमता के स्थान पर क्रियात्मक अनावश्यकता ही प्रमुख कारण प्रतीत होता है। योरोप में इन उपकरणों की अधिकता संभवतः शीत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जलवायु सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति, जैसे पशु चर्म के आवरण व बस्त्रों को बनाने, के लिए इनका उपयोग ही मुख्य कारण प्रतीत होता है जबकि भारत के उष्णकटिबन्धीय जलवायु वाले क्षेत्र जहाँ मध्य व उच्च पुरा-प्रस्तर काल के मानव का वास मुख्यरूप से था— के दैनिक जीवन में सम्भवतः इनकी उपयोगिता महत्वहीन रही होगी।

भारतीय परिवेश में पुरा-प्रस्तर युग के विभिन्न सांस्कृतिक चरणों के विश्लेषण की आवश्यकता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि तीनों चरणों के पूर्व, मध्य व उच्च पुरा-प्रस्तर काल के आवास स्थलों को अधिक से अधिक संख्या में खोज की जाए। इन स्थलों से प्राप्त सभी वर्गों के प्रमाणों के विश्लेषण से ही भारतीय पुरा-प्रस्तर युग के मानव के रहन-सहन की रूपरेखा ठीक से तैयार हो सकती है अभी तक के उपलब्ध अत्यन्त सीमित एवं अपूर्ण प्रमाण इस जानकारी के लिए अपर्याप्त हैं। इस संदर्भ में भविष्य की खोजें ही सही ज्ञान दे सकेंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विशेष सन्दर्भ

आल्चिन, बी० एवं एफ० आर० 1982, **द राइज़ ऑफ़ सिविलाइजेशन इन इंडिया ऐंड पाकिस्तान**, कैम्ब्रिज ।

भट्टाचार्य, डी०के० 1979, **ओल्ड स्टोन एज़ टूल्स (ए मैनुअल ऑफ लेबोरेटरी टेकनीक्स ऑफ़ एनालिसिस)**, कलकत्ता ।

वोर्डेस, एफ० 1968 **द ओल्ड स्टोन एज़**, लण्दन ।

जायसवाल, वी० 1978, **पैलियोहिस्ट्री ऑफ इंडिया**, दिल्ली ।

सांकलिया, एच० डी० 1972, **प्री एंड प्रोटोहिस्ट्री ऑफ़ इंडिया एंड पाकिस्तान**, पूना ।

परिभाषिक शब्द

अतिवृष्टि युग	Pluvial Period	प्रतिनूतन काल के अधिक वर्षा वाले जलवायु चक्र ।
अनुशोधन	Retouching	परिष्करण विधि ।
अनुशोधित धार	Retouched edge	बारीकी से तराशी धार ।
अल्पवृष्टि युग	Inter-Pluvial Period	दो अति-वृष्टि युगों के मध्य को कम वर्षा वाली अवधि ।
अवतल	Concave edge	धँसी हुई धार ।
अहरन	Anvil	पाषाण का बड़ा स्थिर खण्ड जो आधार के रूप में प्रयोग किया जाता है ।
आधार चट्टान	Bed-rock	मूल पाषाण संरचना ।
आरीदार धार	Denticulated edge	अनुशोधन द्वारा बनाई दाँतेदार धार ।
ऑस्ट्रेलोपिथेकस	*Australopithecus*	प्रथम बनमानुषीय आदि मानव जिसने उपकरणों की गढ़न प्रथा प्रारम्भ की ।
उच्च पुरा-प्रस्तर काल	Upper Palaeolithic Period	पुरा-प्रस्तर युग के त्री-काल विभाजन का अन्तिम चरण ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उच्च प्रतिनूतन काल	Upper Pleistocene	प्रतिनूतन काल के त्री-युगीय विभाजन का अन्तिम चरण ।
उच्चांश	Higher altitude	ऊंचे पर्वतीय या ठण्डे प्रदेश ।
उत्तरी विलाफ्रांशियाँ पशुवर्ग	Upper Villa franchiana fauna	मध्य प्रतिनूतन काल के पशुओं का स्वरूप ।
उत्तल-धार	Convex edge	उभरी हुई धार ।
उष्णकटिबन्धीय प्रदेश	Tropical Regions	ग्रीष्म व नम जलवायु वाले क्षेत्र ।
कमासियन	Kamasian	अफ्रीका का तृतीय प्रतिनूतनकालीन अति-वृष्टि युग ।
कागेरन	Kageran	अफ्रीका का प्रथम प्रतिनूतनकालीन अति-वृष्टि युग ।
काज	Wooden hammer	लकड़ी का हथौड़ा ।
कानजेरन	Kangeran	अफ्रीका का द्वितीय प्रतिनूतनकालीन अति-वृष्टि युग ।
कुट्टन्तिक	Chopping tool	गुटिका पर बनी खुट्ठल धार वाला उपकरण जिसकी धार दोनों धरातल से तराशी गई हो ।
कुट्टव्यक	Chopper	गुटिका पर बना एक धरातल से तराशा खट्ठल धार वाला उपकरण ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation

कुण्ठित धार	Blunted edge	तराश द्वारा कुण्ठित बनाई गई धार।
क्रोड़ (खण्डक)	Core	पाषाण खण्ड जिसमें से तराश द्वारा शल्क प्राप्त किए जाते हैं।
खाँचेदार धार	Notched edge	अनुशोधन द्वारा गढ़ेदार धार।
ग्विंज	Günj	मध्यप्रतिनूतन काल का द्वितीय हिम युग।
गुटिका	Pebble	पानी के बहाव द्वारा पाषाण के घिसे टुकड़े।
गुटिकोय जमाव	Gravel deposit	पाषाण टुकड़ों की गुटिकाओं का स्तर जो कि बहते पानी द्वारा जमा होता हैं।
गम्बलियन	Gamblian	अफीका का चतुर्थ प्रतिनूतनकालीन अति-वृष्टि युग।
चतुर्थ युग	Quaternary Period	पृथ्वी के जीवनकाल के चार युगीय विभाजन का अन्तिम या चतुर्थ युग।
चाक	Knife	संकरे शल्कों पर बना उपकरण जिसकी एक धार को अनुशोधन द्वारा कुण्ठित कर दिया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

छिद्रक	Borer	लम्बी नोक वाले उपकरण जिनको बाँधने के लिए प्रयुक्त किया जाता था।
छुरी-फल	Blade	समानान्तर धारों वाले लम्बे व संकरे चिप्पड़।
छोलनी	Scraper	एक या अधिक धार वाले उपकरण जिनसे खुरचने का काम किया जाता था।
जलवायु-चक्र	Climatic-Cycles	जलवायु सम्बन्धी उतार-चढ़ाव जैसे ठण्डा व गर्म या अति-वृष्टि या अल्प-वृष्टि अवधियां।
डान्यूब	Danube	पूर्व प्रतिनूतन काल का हिम युग।
ड्रायोपिथेकस	*Dryopithecus*	आदि मानव व बनमानुष का पूर्वज, बनमानुष।
तक्षणी	Burin	छोटी व विशेष धार वाला उपकरण जो कुरेदने के काम में लाया जाता था।
तीक्ष्ण धार	Sharp edge	तेज धार।
तृतीय युग	Tertiary	पृथ्वी की जीवन अवधि के चार युगीय विभाजन का तीसरा युग।

नदी सोपान	River terrace	जमाव व कटाव प्रक्रिया से बने नदी की घाटियों में पठारनुमा भाग जो क्रम से घटती हुई ऊंचाई वाले होते हैं।
नीयाण्डरथाल मानव	Neanderthal man	आदि मानव की एक अल्प जीवी शाखा जिसका अस्तित्व उच्च प्रतिनूतन काल में था।
नूतन काल	Holocene Period	चतुर्थ युग के दो कालीय विभाजन का द्वितीय चरण।
नूतन प्रस्तर युग	Neolithic Period	प्रस्तर युग के त्री-युगीय विभाजन का परवर्ती काल।
नोकीले शीर्षक	Point	तीखी नोक वाले तिकोने उपकरण।
पुरा-प्रस्तर युग	Palaeolithic Period	प्रस्तर युग का प्रारम्भिक चरण।
पूर्व पुरा-प्रस्तर काल	Lower Palaeolithic Period	पुरा-प्रस्तर युग के त्री-काल विभाजन का प्रारम्भिक चरण।
पूर्व प्रतिनूतन काल	Upper Pleistocene	प्रतिनूतन काल के त्री-युगीय विभाजन का प्रथम या प्रारम्भिक चरण।
प्रकार विद्या	Typology	पाषाण उपकरणों के स्वरूप व आकार के अध्ययन करने की पद्धति।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रतिनूतन काल	Pleistocene Period	चतुर्थ युग के दो कालीय विभाजन का प्रथम चरण ।
प्रस्तर युग	Stone Age	मानव इतिहास का पहला चरण जब पाषण उपकरण ही मुख्य सांस्कृतिक अवशेष थे ।
बेलनाकार हथौड़ा	Cylinder Hammer	शृंग या लकड़ी का भाग जिसको पाषाण गढ़न के लिए प्रयोग किया जाता रहा होगा ।
मध्य पुरा-प्रस्तर काल	Middle Palaeolithic Period	पुरा प्रस्तर युग के त्री-काल विभाजन का द्वितीय या मध्य चरण ।
मध्य प्रतिनूतन काल	Middle Pleistocene Period	प्रतिनूतन काल के त्री-युगीय विभाजन का मध्य या द्वितीय चरण ।
मध्य प्रस्तर युग	Mesolithic Period	प्रस्तर युग के तीन विभाजनों में द्वितीय चरण ।
मानवकृत	Artefact	मानव द्वारा बनायी वस्तुएँ ।
मिट्टी का जमाव	Silt deposit	पानी द्वारा लाई बारीक मिट्टी का स्तर या जमाव ।
मिन्डल	Mindel	मध्य प्रतिनूतन काल का द्वितीय हिम युग ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रामपिथकस	*Ramapithecus*	मानव शाखा की विशेषताओं वाला प्रथम बनमानुषीय जीव।
रिस	Riss	मध्य प्रतिनूतन काल का तृतीय हिम युग।
विदलक	Cleaver	पूर्व पुरा-प्रस्तर कालीन कुल्हाड़ी के आकार का उपकरण जिसका प्रयोग लकड़ी आदि के टुकड़े काटने के लिए किया जाता था।
व्यूम	Würm	उच्च प्रतिनूतन काल का हिम युग।
विलाफ्रान्शियाँ पशुवर्ग	Villfranchiana fauna	प्रतिनूतनकाल के पशु स्वरूप जो आधुनिक पशु वर्ग से भिन्न व पहले का है।
शल्क, चिप्पड़	Flake	छोटा टूटा पाषाण खण्ड।
शिवपिथेकस	*Sivapithecus*	मानव शाखा के गुणों वाला बनमानुषीय जीव।
शीर्ष-छोलनी	End-scraper	शीष या एक भाग पर स्थित धार वाले उपकरण।
हनुमानपिथेकस	*Hanumanapithecus*	बनमानुष शाखा के गुणों से रत प्रथम मानष।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हस्तकुठार	Handaxc	पूव पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण जो अण्डाकार होता है व उसको बारीक तराश द्वारा दोनों धरातलों पर तराशा जाता था।
हिम प्रत्यावर्तन युग	Inter Glacial Period	दो हिम युगों के मध्य का ग्रीष्म ज़लवायु चक्र।
हिम युग	Ice Age, Glacial Period	प्रतिनूतन काल के ठण्डे जलवायु चक्र।
होमो-इरेकटस	*Homo-Erectus*	होमो-जीनस वाला आदि मानव जिसमें द्वीपदीय संतुलन क्षमता भी थी।
होमो-सापियनस	*Homo-Sapiens*	आधुनिक मानव का प्रतिरूप जो कि प्रतिनतन काल के अन्तिम चरणों में प्राप्त हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निर्देशिका

आदियाल, 61
अनगवाड़ी, 69
अफ्रीका, 12, 14, 16, 17, 20, 21, 28, 46, 73, 85
आदमगढ़, 49, 67, 69
आन्ध्र प्रदेश, 46, 62, 68, 69, 76, 78
आल्डोवॉय की घाटी, 13
आल्डोवॉन संस्कृति, 13, 14, 19, 21, 28
आलपस पर्वत, 20
आस्ट्रेलोपिथेकस, 13, 14, 21

इलाहाबाद, 51, 53, 74

उच्च प्रतिनुतन काल 17, 19, 65, 66
उच्च पुरा-प्रस्तर काल, 38, 41, 73, 77, 81, 82
——उपकरण, 42
उड़ीसा, 46, 61, 68
उत्तरी अमेरिका, 20
उत्तर प्रदेश, 46, 61, 68
उत्तर पाषाण युग, 73
उपकरण गढ़न-स्थल, 47

एगेट, 78
एशूलियन उपकरण, 60, 61, 86
——पद्धति, 46, 52, 55
——पद्धति व संस्कृति, 16, 21, 30, 32, 50, 62, 65
——परम्परा, 19, 32, 61, 63

कोकण, 59
कांगरा घाटी, 58
कागेरन, 20
कांजेरान, 20
कुट्टव्यक, 13, 27, 46, 57, 62, 63, 86,
कुट्टन्तिक, 13, 27, 46, 57, 63, 68, 86
क्रोड़, 13, 27, 32, 46, 51, 62, 63, 67
कीना-फेरासी मुस्टेरियन, 17, 70, 71
केन, 61
केम्ब्रिज विश्वविद्यालय, 46
कोर्टलयार, 47, 61
कुर्नूल, 61, 69, 76, 83
क्लीवर, 32, 57
क्वार्टज, 78
क्वार्टजाईट, 49, 67, 68, 69, 71, 78

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कृष्णा, 53, 68, 69

खुट्ठल, 32, 41
खाण्डिवली, 76
खानाबदोश जीवन-निर्वाह पद्धति, 77

गुडियम, 49
गढ़न स्थल, 66, 67
गोदावरी, 53, 61, 68
ग्रेनाईट, 62
गांभीरी, 61, 68
गुलेर, 58, 59
ग्विज, 20
गुहा, 76

चाकरी, 61
चौकोटियन गुफा, 16
चर्ट, 68, 78
चतुर्थ युग, 11
चित्तूर, 76, 78
चीन, 16
चिप्पड़, 13, 16, 23, 25, 27, 32, 34, 38, 42, 46, 51, 57, 60 62, 63, 65, 68, 71, 80, 85
चौपोर-चौपिंग उपकरण, 16
चिरकी-नेवासा, 51
चालीस-डोनी, 78

छोटी धार वाले उपकरण, 86
छिद्रक, 32, 44, 69
छुरी-फल, 26, 38, 42, 74, 78, 80, 81
छोलनियां, 16, 32, 44, 57, 60, 62, 67, 69

जादू-टोने, 72
जलवायु चक्र, 19, 52
जासपर, 68, 78

डैटीकुलेट मुस्टेरियन सस्कृति, 71
डान्यूब, 20
ड्रायोपिथेकस, 12
ड़ार्विन, 12

तिकोने नोकीले उपकरण, 86
तुंगभद्रा, 59, 68
ताप्ती नदी, 78
तामिलनाडु, 46, 49, 61
तृतीय युग, 12
तृतीय गुटिकीय जमाव, 74, 75, 81
तक्षणी, 42, 44, 80, 81

दिल्ली, 73
दक्षिण-पूर्व एशिया, 14, 28

धलियारा, 58

नोकीले शीर्षक उपकरण, 34
नोकीले श्रृंग, 78
नागार्जुन कोण्डा, 62
नूतन काल, 11, 53
नूतन पाषाण गढ़न पद्धतियां, 16
नोमेडिकस पशु वर्ग, 19
नर्मदा, 47, 53, 55, 61, 68, 69

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नीयाण्डरथाल, 16, 18, 21, 38, 71
नाल गोण्डा, 61
नालगढ़, 58
नैलोर, 61
नेवासा, 51, 64, 65, 71
——संस्कृति, 65

प्राकृतिक गुफा, 47-49, 72
प्रतिनूतन काल, 11, 12, 16, 19-21, 52, 53, 77
पोतवार, 58
पूर्व नूतन युग, 21
प्रस्तर युग, 25
पुरा-प्रस्तर युग, 18, 32, 46, 53, 85-87
पूर्व पुरा-प्रस्तर उपकरण, 67
पूर्व पाषाण युग, 22
प्रारम्भिक पाषाण युग, 73
प्रवरा नदी, 51, 64, 68
पल्लवरम, 46
पश्चिमी बंगाल, 61
पुष्कर, 61, 76
पाषाण उपकरण, 13
—— गुटिका, 27, 53, 55
—— गढ़न शैली, 14
—— हथौड़े, 27, 55
पैसरा, 50

फ्रान्स, 17, 37, 46

बेतवा, 53, 61, 68
बानगंगा, 52
बम्बई, 75
बैराईच, 61, 68
बरियारपुर, 61
बेलन, 53, 55, 59, 61, 68, 73, 75, 77, 78, 81, 83
बेलनाकार हथौड़ा, 25
बेलनाकार मुलायम हथौड़े, 14
बुशे-द-पार्थिये, 46

भीमा, 53, 55, 68
भीमबेठका, 49, 67, 76, 83

मिटी के जमाव, 52
मातृदेवी प्रतिमा, 83
मिण्डल, 20
मद्रास, 46, 49, 61
मध्य प्रतिनूतन काल, 12, 66
मध्य पुरा-प्रस्तर काल, 16, 32, 34, 69, 70 87
मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन उपकरण, 64
मध्य प्रदेश, 46, 68, 76, 77
मध्य पाषाण युग, 73
मयूरभंज, 61
मिर्जापुर, 51, 53, 74, 76
मुस्टेरियन क्रोड़, 71
——पद्धति, 38
——संस्कृति, 17
महादेव पिपरिया, 60, 61, 69
महानदी, 53, 68
महाराष्ट्र, 61, 62, 68, 76, 77

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योरोप, 14, 16-18, 46, 62, 69, 71, 82, 83, 86
योरोपीय मध्य पुरा-प्रस्तर कालीन संस्कृति, 71
योरोपीय मुस्टेरियन, 18
येल विश्वविद्यालय, 46

राजपूताना, 46, 68
राजस्थान, 61, 76
रेडियो कार्बन तिथि निर्धारण, 65
रेनीगुण्टा, 78, 81
रामपिथेकस, 12
रिस, 20

ला मुस्टेर, 17
ललितपुर, 15, 62
लवालुवा चिप्पड़, 37
पद्धति, 17, 38, 67, 68, 71

बिदलक, 16, 32, 46, 58, 60-63, 67
विन्ध्य पर्वत माला, 76
वामनु, 60, 61
व्यूम, 20
व्यास, 52
विलाफ्रांशिया पशुवर्ग, 19, 21

शर्मा, प्रो० गोबर्धन राय, 73, 74
शोरापुर दोआब, 76
शिवपिथेकस, 12
शीर्ष छोलनियां, 42, 44, 80, 83

सांकलिया, प्रो०, 64, 65
सिन्ध, 47
सोन, 61, 68, 71, 76
सापियनस, 17
सोपान, 52
सिरसा, 52, 58
सिसुनियां पर्वतमाला, 61
सिहँभूम, 76
सोहन, 52, 53, 61, 67, 69
——संस्कृति, 52, 53, 58, 68

हाथी कूँआ, 64
हनुमानपिथेकस, 12
हिम युग, 19
होमो-इरेकटस, 14, 16, 21
होमो-जीनस, 14
होमो-सापियनस, 18, 21, 83
हिम प्रत्यावर्तन युग, 19
हिमालय, 12, 20, 65
हीरपुर, 58
हस्तकुठार, 16, 30, 31, 46, 57, 61, 63
हुसंगी, 50

त्रिकोणीय चिप्पड़, 68

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वाति पब्लिकेशन दिल्ली